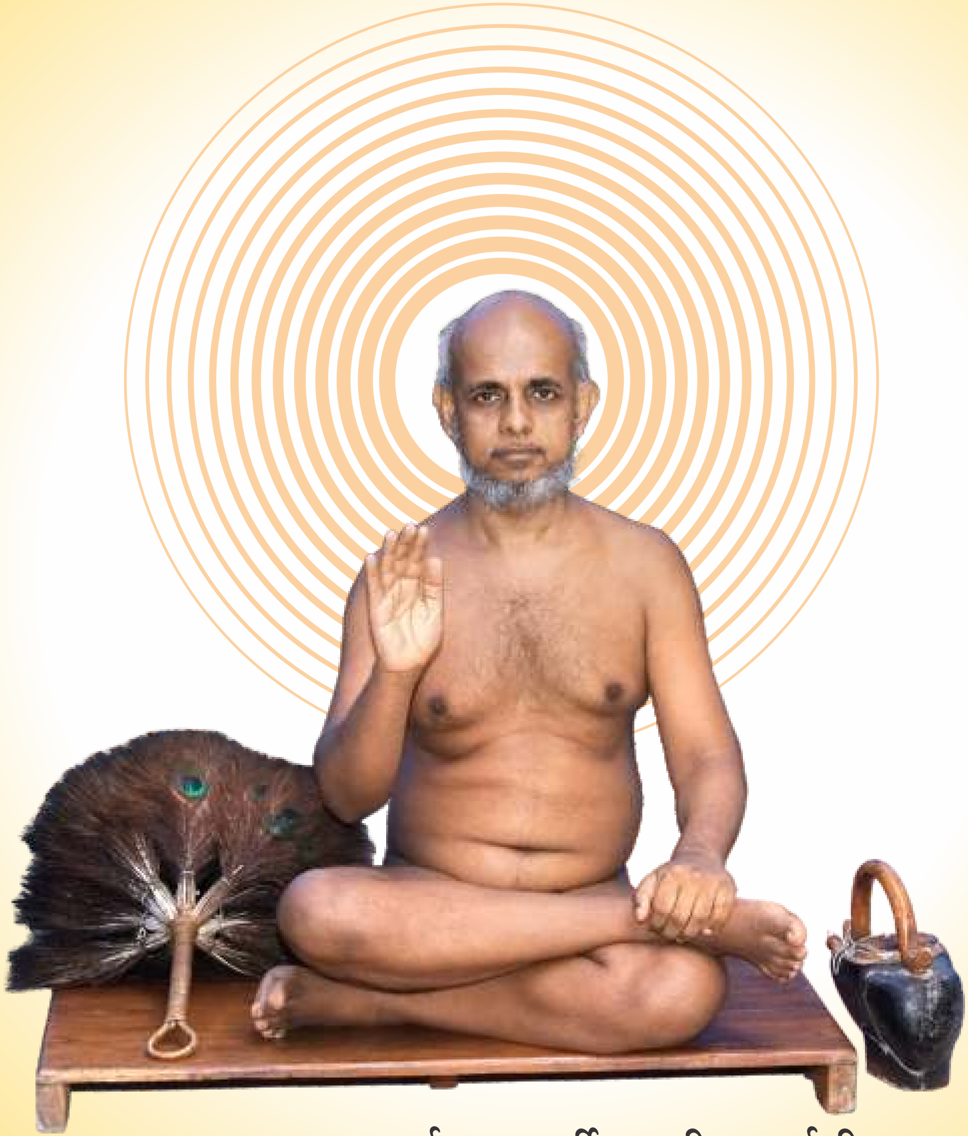

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणाः–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

अध्यात्म पंच संग्रह

ग्रन्थकर्ता

स्वर्गीय पं. दीपचंदजी शाह

प्रकाशक
श्री दि. जैन अमरग्रंथमाला, उदासीनाश्रम तुकोगंज,
इन्दौर

(परम्परानायक)

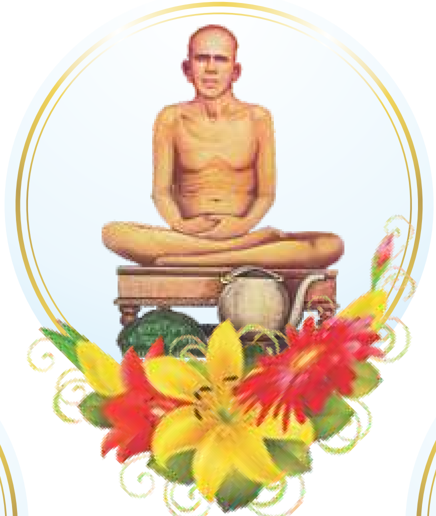

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

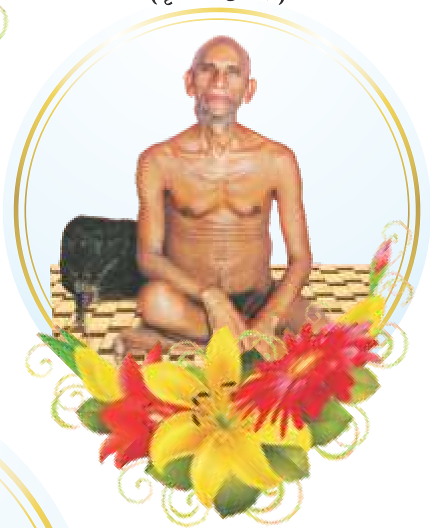

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्राय: होता है। फलत: उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तुत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

श्री दि. जैन अमरग्रन्थमाला का पंचम पुष्प—

कविवर स्वर्गीय पं. दीपचंदजी शाह कृत

अध्यात्म पंच संग्रह

परमात्मपुराण, ज्ञानदर्पण,

स्वरूपानन्द, उपदेशसिद्धांतरत्न,

सवैयाटीका

प्रकाशक— श्री दि. जैन अमरग्रंथमाला, उदासीनाश्रम तुकोगंज इन्दौर

वीर निर्वाण सं. २४७५, विक्रम संवत २००५

इस ग्रन्थ के लिए प्राप्त सहायता—

३००) रु. श्री स्व. सेठ गुलाबसा मोहनसा मलकापुर (बरार) के पारमार्थिक खाते से मार्फत नथूसा सराफ।

२०१) रु. श्री दि. जैनसमाज मलकापुर की ओर से

इस ग्रंथकी प्रति १००० प्रकाशित की है जिसमें ३०० प्रति जिनालय और संस्थाओं को बिना मूल्य, मात्र पोस्टेज खर्च आनेपर भेजी जायगी. शेष प्रतियां लागतमात्र मूल्य से दी जायगी. जिसकी आय अन्य ग्रंथ प्रकाशन में व्यय की जायगी.

अमरग्रंथमालाकी ओरसे ग्रंथ प्रकाशन के ध्रौव्यफंडमें प्राप्त सहायता

१००) रु. श्री. शिवलालजी चंपालालजी टोंग्या, इन्दौर (उदयपुर)

१००) रु. श्री बालचंदसा नथुसा सराफ, मलकापुर (बरार)

१०१) रु. श्री कचरूसा रामसा जटाले, मलकापुर

१०१) रु. श्री सेठानी अनूपबाईजी, मानकभवन इन्दौर

१०१) रु. श्री तेजकुमारीबाईजी, विनोदमिल्स उज्जैन

नोट—ध्रौव्यफंडमें कमसे कम १००) रु. सहायता देनेवाले दातारोंको ग्रंथमाला से निकलने वाले तथा अभीतक प्रकाशित हुए समस्त ग्रंथ बिना मूल्य दिये जायेंगे और उनका ग्रंथमालाके संरक्षकोंमें नाम रहेगा।

हमारे यहां से प्रकाशित ग्रन्थ मगाइये-

१	भावदीपिका		३)
२	अनुभवप्रकाश		१)
३	चौवीसठाणाचर्चा		।॥)
४	त्रय संग्रह	(बारहभावना, समाधिमरण, आत्मबोध)	१)
५	अध्यात्म पंच संग्रह		२)

नन्दीश्वर द्वीपविधान बावन पूजा स्व. पं. जिनेश्वरदासजी कृत छपरहा है ।

नोट-उपर्युक्त ग्रन्थ वाचनालय, जिनालय आदि संस्थाओं को तथा परिग्रहत्यागी श्रावकों और साधुओं को मात्र पोष्ट-खर्च आने पर भेजे जावेंगे ।

मिलने का पता-

दि. जैन उदासीनाश्रम तुकोगंज इन्दौर.

ग्रंथानुक्रमणिका

अ नं	ग्रंथ के नाम		कुल पृष्ठ
१	परमात्मपुराण	(गद्य)	६८
२	ज्ञानदर्पण	(पद्य)	६६
३	स्वरूपानन्द	(,,)	३०
४	उपदेशसिद्धान्तरत्न	(,,)	२६
५	सवैयाटीका	(गद्य)	६

भूमिका

प्रस्तुत संग्रह मे परमात्मपुराण, ज्ञानदर्पण, स्वरूपानंद, उपदेश सिद्धान्त रत्न और सवैया टीका ये पांच ग्रंथ है। पांचोंही कविवर श्री दीपचन्दजी शाह कासलीवाल द्वारा रचित है। आपका निवास स्थान सांगानेर था परन्तु ग्रंथरचना आपने आमेर (जयपुर) मे रहकर की थी। आप विक्रम की अठारह वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हुए है। इन रचनाओं और अन्य प्रकाशित ग्रन्थों के देखने से सहज ही ज्ञान होजाता है कि आपका आध्यात्मिक ज्ञान एवं कवित्व उच्च कोटिका था। आपके ग्रंथोंकी भाषा राजपुताने ढूंढारी है परन्तु जैसी भाषा पंडित प्रवर टोडरमलजी आदि सिद्धान्त शास्त्र के महान् विद्वानोंकी रही है, वैसी भाषा इनकी नहीं। इनकी भाषा मे एक ही शब्द व वाक्यरचना के अनेक प्रयोग मिलते है। कि आपने उस काल मे ग्रंथ रचना करने की जो भाषा प्रचलित थी उसमे अनभ्यस्त रहते हुए भी उस भाषा का तोडमरोडकर प्रयोग करने का प्रयत्न किया है। इसीलिए हमे भाषा संबंधी भिन्न २ प्रयोगो को एकसा बनाने का खयाल रखना पड़ा है। कई स्थानो पर तो आपने शुद्ध संस्कृत शब्दोंका जैसा का जैसा ही प्रयोग किया है और कई जगह उन्हे देशीभाषा मे बदल दिया है। आपकी प्रथम रचना आत्मावलोकन ज्ञात होती है जो भाषा की दृष्टि से साधारण है, पर वह भावों की गहनता और आध्यात्मिकसामग्री के कारण अपना महत्व रखती है। आत्मावलोकन श्री पाटनी दि. जैन ग्रंथमाला मारोठ से प्रकाशित हो चुका है और इसी ग्रंथमाला से अनुभवप्रकाश भी छपचुका तथा चिद्विलास छप रहा है। अमर ग्रंथमाला मे अनुभव प्रकाश और भाव दीपिका ग्रंथ छप चुके है। वे सब ग्रंथ उक्त

प. दीपचंदजी सा. की ही रचनायें है। आपकी भावदीपिका, अनुभव प्रकाश और परमात्मपुराण ये गद्य रचनायें सर्वश्रेष्ठ रचनाये है। परमात्मपुराण तो बिल्कुल ही मौलिक है जिसमे ग्रथकार की कल्पना और प्रतिमा निखर पडती है। ज्ञानदर्पण, स्वरूपानंद, उपदेश सिद्धांत ये तीन पद्य रचनाये है इनमें दोहा और सवैया में आत्मदृष्टि की ओर झुकने की प्रेरणा मिलती है और बहिर्मुखीवृत्ति सांसारिकता के दोषो का भिन्न २ शब्दों में सोदाहरण विशद विवेचन है। इनके पढने में अपूर्व आनंद आता है। ज्ञानदर्पण और स्वरूपानंद आपकी सुंदर कृति है। यह पहले भी प्रकाशित हो चुकी है। शेष ग्रंथ नवीन ही प्रकाश मे आरहे है। व ग्रथकार प. टोडरमलजी सा. के पहले के है क्योंकि टोडरमलजी सा. ने आपके आत्मावलोकन ग्रथका उद्धरण अपनी रहस्यपूर्ण चिट्ठी मे दिया है। प्रस्तुत रचनाओं मे हम पृथक २ ग्रंथों का परिचय नहीं दे रहे है यह तो उन ग्रंथो के मोटे २ अक्षरो में लिखे हुए शीर्षको से मालूम हो जायगा और पद्य ग्रंथों मे केवल आध्यात्मिक भाव ही है किसी खास विषय को लेकर विवेचन नहीं है। सवैया टीका मे एक सवैया प्रारंभ मे लिखकर उसका विस्तारपूर्वक अर्थ लिखा गया है।

इन ग्रंथोंका टाइप भी मोटा रखा गया है ताकि वयोवृद्ध एवं त्यागी महानुभाव भी बिना कष्टके इन्हें पढ सकें।

श्री पूज्य भ. ब्र. दुलीचन्दजी महाराज उपाधिष्ठाता श्री दि. जैन उदासीनाश्रम तुकोगंज इन्दौर संस्था के श्री दि. जैन अमर ग्रंथालय में विद्यमान हस्तलिखित ग्रंथों को स्वाध्यायप्रेमी मुमुक्षु बंधुओं के लाभार्थ छपाना उचित समझकर यह आयोजन किया है। आप इस ओर पूरायोग देकर परिश्रम कररहे है दानी सज्जनों द्वारा आपको इस कार्य में द्रव्यकी सहायता भी मिलती जारही है। आशा है पाठकगण इन ग्रंथों को पढकर एवं मनन कर आत्महित की ओर अग्रसर होंगे।

—**नाथूलाल जैन** (साहित्यरत्न, संहितासूरि, शास्त्री न्यायतीर्थ) इन्दौर.

शुद्ध्यशुद्धिपत्र

भूमिका

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	७	राजपूताने	राजपूताने की
१	९	प्रचलित की	प्रचलित थी
१	१२	जैसाकाजैसा	जैसाकातैमा
२	३	प्रनिमा	प्रातिभा
२	१३	इन्दौर	इन्दौर ने

परमात्मपुराण

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	६	किस	तिस
४	३	आग	आगै
६	३	वर्यिब्रह्मचारी	वीर्यब्रह्मचारी
७	१०	हाये है वनके	होय है विनके
८	९	अवलाकेन	अवलोकन
९	६	,,	,,
१२	४	द्रव्याश्रय	द्रव्याश्रया
१३	१०	प्रणाम	प्रमाण
१९	१०	तानै तातै	तातैं
२०	१२	यानं	यातैं गुणकी सिद्धि, परिणति गुण की तैं है। गुणका वेदना गुणपरणति नैं कीया है। वेदना भाव
२२	३	साध	साधै
२२	५	वीय	,,
२२	६	साध	साधै
३६	१२	ज्ञानम	ज्ञानमैं

४६	५	व्याप	व्यापै
४६	१०	वन	द्रवन
५१	७	धग्य	धन्या

ज्ञानदर्पण

३	१२	भवनमें	न वर्तै
६	११	दीउ	दोउ
६	११	पहिलान	पहिचान
७	९	नैयवतै	नैयकतै
१७	८	त्रिकाल	त्रिकाल
१९	१२	लोकालोक	लोकालोक
२१	६	बखानि	बखाना
३२	४	+ दोयशत जोजनमे,	होय शत जोजन मे-
३६	३	नभशद्धता	नभशुद्धता
३७	८	व्याहार	व्योहार
४७	११	पर	पैर
,,	१२	वधू	वधू

स्वरूपानन्द

२	२	आग	औंग
७	१	ग्रन्थ	ग्रंथ
७	१०	म	मैं

उपदेशसिद्धांतरत्न

२	५	आपजे	आपनो
५	७	भिरे	मिटे

सवैयाटीका

८	७	भगौ	भग्या
९	१	उपदेशसिद्धांतरत्न	सवैयाटीका

+ पहली प्रति मे दोयशत ही छपा है, पर इटकर्त्तासी मे 'जोजन इकशत मे भूमिग्व' है अत यहा सुधारा जा रहा है।

परमात्मपुराण की विषयसूची

१ मंगलाचरण १
२ परमात्मारूपी राजा का राज्य और उसकी विभूति १
३ आत्मप्रदेश रूपी देशों के निवासी गुणरूपी पुरुषोंको क्षत्रिय, वैश्य, ब्राह्मण, शूद्र, ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ, गृहस्थ, साधु, ऋषि, मुनि और यति क्यों कह सकते हैं ? २
४ गुणोंको प्रथक २ क्षत्रिय कहसकने में हेतु २
५ गुणोंको प्रथक २ वैश्य कहसकने में हेतु ३
६ गुणों को अलग अलग ब्राह्मण कह सकने में हेतु ४
७ गुणों को अलग अलग शूद्र कह सकने में हेतु ५
८ गुणों को चार आश्रमों में से ब्रह्मचारी कह सकने में हेतु ५
९ गुणों को गृहस्थ कह सकने में हेतु ६
१० गुणों को वानप्रस्थ कह सकने में हेतु और प्रथक २ गुणों को वानप्रस्थपने को सिद्धि ६

११ सत्ता, द्रव्यत्व अगुरुलघुत्व, प्रमेयत्व, ज्ञान, दर्शन, आदि गुणों को प्रथक२ ऋषि, साधु, यति और मुनि कह सकने में हेतु ३८

१२ परमात्मारूपी राजा के सरदार ४१

१३ प्रत्येक गुण-पुरुष का अपनी गुणपरिणाति-नारी के साथ भोगविलास का वर्णन ४२

१४ अगुरुलघु-नर द्वारा कियेगये विलासके समय शृंगार आदि नवरसोंकी सत्तागुणमें सिद्धि ४८

१५ गुण-पुरुषों का गुणपरिणति-नारी से विलास और उनके संयोग से आनंद-पुत्रकी उत्पत्ति ५२

१६ दर्शन, ज्ञान, चारित्र इन तीन मंत्रियों द्वारा परमात्मा-राजा की सेवा ५३

१७ सम्यक्त-फौजदार और परिणाम-कोटवाल का कार्य ६०

१८ परमात्मा-राजा और उसकी चित्परिणति तिया ६५

ॐ

परमात्मपुराण

दोहा--परम अखंडित ज्ञान मय, गुण अनंत के धाम ।
अविनासी आनंद अज, लखत लहै निज ठाम ॥१॥

अचल अतुल अनंत महिमा मंडित अखंडित त्रैलोक्य शिखर परि विराजित अनुपम अबाधित शिव द्वीप है। तामें आतम प्रदेस असंख्यदेस हैं सो एक एक देस अनंत गुण पुरुषनिकारि व्याप्त है। जिन गुण पुरुषन कै गुण परिणति नारी है। किस शिव द्वीप कौ परमातम राजा है। ताके चेतना परिणति राणी है। दरशन ज्ञान चरित्र ये तीन मंत्री हैं। सम्यक्त्व फोजदार है। सब देश का परिणाम कोटवाल है। गुणसत्ता मंदिर गुण पुरुषन के

है। परमातम राजा का परमातम सत्ता महल वर्ण्यां तहां चेतना परिणति कामिनीसों केलि करत परम अतीन्द्रिय अवाधित आनंद उपजे है। गुण अपने लक्षण की रक्षा करै तातैं यह सब गुण क्षत्रिय कहिये। अरु गुणरीति वरतनां व्यापार करै तातैं वैश्य कहिए। ब्रह्मरूप सब हैं। तातैं ब्राह्मण कहिए। अपणी परिणति वृत्ति करि आपकौं आप सेवै तातैं शूद्र कहिए। ब्रह्म कौं आचरण सब गुण करैं तातैं ब्रह्मचारी। अपनी गुण परिणति तिया के विलास बिना पर परिणति नारी न सेवै है तातैं परतिया त्याग ब्रह्मचारिज के धारी ब्रह्मचारी है। अपने चेतनावान कों धारी प्रस्थान कीयें तातैं वानप्रस्थ है। निज लक्षण रूप निजगृह में रहे हैं तातैं गृहस्थ है। स्वरूप कों साधै तातैं साधु कहिए। अपनी गुण महिमा रिध्दि कों धारै तातैं रिषि कहिए। प्रत्यक्षज्ञान सब में आया तातैं मुनि कहिए। परभाव को जीति लियो तातैं यति कहिए। इनमें जो विशेष है सो लिखिए है।

क्षत्रिय का वर्णन।

सब गुण परस्पर सब गुण की रक्षा करै है सो कहिए है। प्रथम सत्ता गुण के आधारि

सब गुण हैं तातैं सत्ता सब की रक्षा करै है। सूक्ष्म गुण न होता तो चेतन सत्ता इन्द्रिय ग्राह्य भये अतीन्द्रियत्व प्रभुत्व का अभाव होता महिमा न रहती तातैं सूक्ष्मत्व सब अतीन्द्री प्रभुत्व की रक्षा करै है। प्रमेयत्व गुण न होता तो वीर्यादि सब गुण प्रमाण करवेजोग्य न होते तातैं प्रमेयत्व सबका रक्षक है। अस्तित्व बिना सब का अभाव होता तातैं सब की अस्तित्व रक्षा करै है। वस्तुत्व न होता तो सामान्य विशेष भाव सब का न रहता तातैं वस्तुत्व सब की रक्षा करै है। या प्रकार सब गुण में रक्षा करणैं का भाव है तातैं क्षत्रियपणां आया।

आगैं वैश्यवर्णन कहिये है।

अपनी अपनी रीति बरतनां व्यापार सब करै है। दरशन देखबे मात्र मात्र निर्विकल्प रीति वरतनां—स्वपर देखने की रीति—वरतनां व्यापार करै है। सत्ता है लक्षण निर्विकल्प रीति वरतना विशेष द्रव्य है। रीति गुण है रीति वरतनां पर्याय है रीति वरतनां व्यापार करै है। वस्तुत्व सामान्य विशेष रूप वस्तुभाव निर्विकल्प रीति वरतनां ज्ञान में सामान्य विशेष रीति वरतनी सब गुण में सामान्य विशेष रीति वरतनां व्यापार कहिए। प्रत्येक गुण प्रमाण करवेजोग्य निर्विकल्प

रीति वरतनां गुण नैं प्रमाण करवेजोग्य विशेष वरतनां व्यापार प्रमाण गुण करै है। या प्रकार सब गुण में निर्विकल्प रीति अरु विशेष रीति वरतनां व्यापार है तातै सब वैश्य कहिये।

आगे ब्राह्मण का वर्णन कीजिये है।

ज्ञान गुण निज स्वरूप है। ब्रह्म ज्ञान तैं एक अंस हू अधिक ओछा नांही। ज्ञान प्रमाण है, ज्ञान स्वरूप है। ज्ञान बिना भयें जड होय तातैं जानपणां बिना सरवज्ञ न होइ। तब ब्रह्म की अनंत ज्ञायक शक्ति गयें ब्रह्मपणां न रहै, तातै ज्ञान ब्रह्म व्यापक ब्रह्म रूप है, तातैं ज्ञान को ब्राह्मण संज्ञा भई। दरशन स्वरूपमय है, सर्वदरशित्व शक्ति ब्रह्म में दरशन करि है, दरशन बिना देखने की शक्ति ब्रह्म में न होय तातैं दरशन सब ब्रह्म मैं व्यापि ब्रह्मरूप होय रह्या है। तातैं ब्रह्म सरूप भया दरशन ब्राह्मण कहिये। प्रमेय गुणतैं सब द्रव्य गुण पर्याय प्रमाण करवे जोग्य है तातैं प्रमेय ब्रह्मसरूप तातैं प्रमेय ब्राह्मण भया। या प्रकार सब गुण ब्राह्मण भये।

—❀—

आगें शूद्रसरूप गुण को बतावै है।

अपनी पर्यायवृत्ति करि एक एक गुण सब गुण की सेवा करै है, ताकौ वर्णन--सूक्ष्मगुण के अनंतपर्याय ज्ञान सूक्ष्म दरसन सूक्ष्म वीर्य सूक्ष्म सत्ता सूक्ष्म सूक्ष्म गुण अपनी सूक्ष्मपर्याय न देता तौ वे सूक्ष्म न होते। तब स्थूल भयें इन्द्रिय ग्राह्य भयें जड़ता पावते, तातैं सूक्ष्म गुण अपनी सूक्ष्मपर्याय दे सब गुण का स्थिति भाव सुद्ध यथावत कार्य संवारै है। यातैं सूक्ष्मगुण की सेवावृत्ति सधी। तातैं सूक्ष्मगुण शूद्र ऐसा नाम पाया। सत्तागुण के अनंत-पर्याय सत्ता है लक्षण पर्याय सबकौ दीये तब सब गुण अस्तिभाव रूप भये अपनी आस्तिभाव पर्याय दे उनके अस्तिभाव राखन के कार्य संवारे। तातैं सत्ता उनके कार्य संवारने तैं उनकी सेवावृत्ति भई तब सत्ता कौ शूद्र ऐसा नाम भया। या प्रकार सब गुण शूद्र भये।

आगें च्यारि आश्रम भेद लिखिये है।

सब गुण ब्रह्म आचरण कीये हैं, तातैं ब्रह्मचारी हैं। ज्ञान ब्रह्म एक है तातैं ज्ञान ब्रह्म

का आचरण कीये है ज्ञान ब्रह्मचारी। दरशन ब्रह्मरूप तातै दरशन ब्रह्मचारी। वीर्य सब ब्रह्म की निहपन राखै, तातैं ब्रह्म वीर्यशक्ति तैं ब्रह्म भया है। तातैं वीर्य ब्रह्म के आचरण रूप भया तातैं वीर्यब्रह्मचारी, सत्ता ब्रह्मरूप तातै सत्ता ब्रह्मचारी। या प्रकार सब गुण ब्रह्मचारी हैं।

आगैं गृहस्थ भेद लिखिये हैं—

ज्ञान निज ज्ञान सत्ता गृह मै तिष्ठै है तातैं ज्ञान गृहस्थ कहिये। दरशन अपनें दरशन सत्ता गृह मैं स्थिति कीयें है; तातै दरशन गृहस्थ, वीर्य अपनें वीर्य सत्ता गृह मैं निवसै है तातैं वीर्य गृहस्थ, सुख अपने अनाकुललक्षण सुख सत्ता गृह में स्थिति कीये है; तातैं सुख गृहस्थ है। या प्रकार सब (गुण) गृहस्थ हैं।

आगैं वानप्रस्थ भेद कहिये।

अपने निज वान मैं प्रस्थ कहिये तिष्ठै। वान आपका निज रूप तामै रहणां सो वानप्रस्थ तातैं ज्ञान अपने जानपना रूप रहै। दरशन अपनें द्रश्य चेतना रूप मैं स्थिति कीये है। सत्ता

सासता लक्षण रूप मैं सदा विराजै है। प्रमेय अपनें प्रमाण करवे जोग्य रूप मैं अवस्थान करै है। या प्रकार सब गुण अपनें निज रूप रहै हैं। ज्ञान का निज वान ऐसा है। विशेष जाणन प्रकाश रूप भया है, अरु आप आप मैं जाननरूप परणया है। अपनें जानन तैं अपनी सुद्धता भई। सरूप सुद्ध के भयें महज ज्ञायकता के विलास नैं अनंत निज गुण का प्रकाश विकास्या तब गुण गुण के अनंत परजाय भेद सब भासे, अनंत शक्ति की अनंत महिमा ज्ञान मैं प्रगट भई।

इहां कोई प्रश्न करै–ज्ञेय प्रकाश ज्ञान मे भया उपचार तैं जानना है, अपने गुण का जानना कैसे है ?

ताका समाधान–पर ज्ञेय का सत जुदा है, निज गुण का सत ज्ञान के सत सौं जुदा नांही। ज्ञान की ज्ञायकता के प्रकाश मैं एक सत जान्या गया है। जो उपचार होय है विनके जानें आनंद न होइ। (प्रश्न) आनंद होइ है तो गुण विषै गुण उपचार क्यौं कह्या ? **तहां समाधान**–ज्ञान मैं दरशन आया सो ज्ञान दरशन रूप न भया, काहे तैं उसका

देखनां लक्षण सो ज्ञान मैं न होय। वीर्य का निहपति करण सामरथ्य लक्षण ज्ञान मैं न होय ऐसैं अनंत गुण के लक्षण ज्ञान न धरै, तातैं लक्षण अपेक्षा उपचार लक्षण विनके न धरै। अरु आये ज्ञान मैं कहे तातैं उपचार सत्ता भेद नांहीं। अनन्य भेद तैं ज्ञानसत; दरशन सत; वीर्य सत; सुख सत; ऐसा कलपि करि भेद कह्या परि प्रथक भेद नाहीं। तातैं भेदाभेद विशेष सत लक्षण की अपेक्षा करि जांनिये। ज्ञान द्रव्य गुण पर्याय निज सरूपकौं जानैं; ज्ञान ज्ञानकौं जानैं तहां आनंद अमृत रस समुद्र प्रगटै। सब द्रव्य गुण पर्याय ज्ञान प्रकाशे तब प्रगटे। ज्ञान नैं विनकी महिमा प्रगट करी तातैं ऐसा ज्ञान सरूप ज्ञानवान है, तामैं ज्ञान रहै तब ज्ञान वानप्रस्थ कहिये। दरशनवान दरशन रूप सो सब द्रव्य गुण पर्याय का सामान्य विशेषरूप वस्तु का निर्विकल्प सत्त अवलोकन करै है। तहां सब लक्षण भेदाभेद उपचारादि रीति ज्ञान की नांई जानि लेणी। आनंद का प्रवाह निज अवलोकनितैं होय है। निर्विकल्परस मैं भेद भाव विकल्प सब नहीं, निर्विकल्परस ऐसा है; तहां विकल्प नहीं।

प्रश्न इहां उपजै है—जो दरशन दरशन कौं देखै सो तौ निरविकल्प ज्ञानादि अनंतगुण

अवलोकन मैं विकल्प भया कि निरविकल्प रह्या? जो निरविकल्प कहौगे तौ पर दूजा गुण का दूजा लक्षण के देखवे करि निरविकल्प न रह्या, अरु विकल्प कहौगे तौ निरविकल्प दरशन यहकीना न संभवैगा।

ताका समाधान–ज्ञेय का देखना तौ उपचार करि वामै आया। दरशन मै और गुण दरशन बिनां जो देखे लक्षण करि तौ उपचार सब के लक्षण देखे। सत्ता अभेद है ही, अनन्य भेद प्रथक भेद नांहीं सब का निर्विकल्प सत। अवलोकन तैं निर्विकल्प है। दरशन दरशनकौं देखै, दरशन की शुद्धता निर्विकल्प है। अपनां निज देखना तौ अपनें दिष्टा लक्षण सौं व्यापक तन्मय लक्षण अभेद है। दरशन दरवि; देखना गुण, देखवे रूप परिणमन पर्याय; निश्चय अभेद दरशन भेद कथन मात्र मै व्यौहार है। निजरूपकौं देखतैं सब गुण का देखनां तौ है। धरें देखवे मात्र गुण कौं है आन लक्षण न धरैं। अपनें स्वगुण के प्रकाश मैं आनगुण स्वजाति चेतनां की अपेक्षा प्रकाशे। जिम सत मैं सौं अपनां गुण प्रकाश्या तिस सत मैं सब गुण प्रकाशे पिरि तिनके लक्षण कौं धरता तौ विकल्पी होता। अपना प्रकाश

देखवे मात्र ज्यौं का त्यौं राखै है। आपनी दरशन रूप दरपन भूमि मैं पर ज्ञेय विजाती होइ भासै है। निज जाति चेतना एक सत्ता तैं प्रगटी सो सब गुण की दरशन प्रकाश की साथि जुगपत प्रगटी। अपना प्रकाश निर्विकल्प जैसा है तैसा रहै है। विजाति पर ज्ञेय स्वजाति प्रथक चेतना ज्ञेय अप्रथक चेतना स्वजाति ज्ञानादि अनंत गुणादि ज्ञेय सब लक्षण भेद, अरु सत्ता अभेदादि रूप भासै। पणि निर्विकल्प सत्ता अवलोकन लक्षण कौं न तजै। काहू कौं उपचारू करि देखना काहू कौं स्वजाति उपचार देखनां। प्रथक भेदतैं काहू कौं अप्रथकता करि देखना। अभेद चेतना जाति तातैं ऐसा देखना है। तौऊ अपनें निर्विकल्प प्रकाश लक्षण लीयें अखंडित दरशन निर्विकल्प रहै है। यह दरशन वान कहिये रूप मैं रहै तातैं दरशन वानप्रस्थ कहिये।

प्रमेय सामान्य है; सब मैं व्यापक है द्रव्य प्रमाण करवे जोग्य प्रमेय तैं भया सब गुण प्रमाण करवे जोग्य प्रमेय के पर्याय नैं कीये पर्याय प्रमेय नैं प्रमाण करवे जोग्य कीये। प्रमेय प्रमाण करवे जोग्य लक्षण कौं लीये है। जो प्रेमय न होता तौ सब अप्रमाणहोते। तातैं प्रमेय गुण अपनें प्रमाण करवे जोग्य रूपमय भया है। सत्तागुण कौं प्रमाण प्रमेय नैं

कीया, काहे तैं सत्ता सासता है लक्षण कौ लीये है सो सम्यक्ज्ञान नै प्रमाण कीया तब प्रमेय नाम पाया।

कोई प्रश्न करै है—सत्ता अपना लक्षण प्रमाण करवे जोग्य आप लीये है। यहां प्रमेय-करि प्रमाण करवे जोग्य काहे कौ कहौ। सब गुण अपनें अपनें लक्षण करि अपनी अनंत महिमा लीयें प्रमाण करवे जोग्य हैं प्रमेय तैं काहे कहौ ?

ताकौ समाधान—एक एक गुण सब आनगुण की सापेक्ष लीयें हैं। एक एक गुण करि सब गुण की सिद्धि है। चेतनां गुण नैं सब चेतना रूप कीये। सूक्ष्मगुण सब सूक्ष्म कीये। अगुरूलघु नै सब अगुरूलघु कीये। प्रदेशवत्व गुण नैं सब प्रदेशी कीये तैसैं प्रमेयगुण नैं सब प्रमाण करिवे जोग्य कीये। प्रमेयगुण नैं विनके लक्षण कौं प्रमाण करिवे जोग्य कै वास्तै विन के लक्षण के मांही प्रवेश करि अभेद रूप सत्ता अपनी करि दई है। तातैं सब गुण प्रमाण करिवे जोग्य भये। जो सब गुण अपनें लक्षण कौं धरते प्रमेय विनके माहि न होता तौ अप्रमाण जोग्य होते। तातैं अन्योन्य सापेक्ष सिद्धि है।

उक्तं च--नाना स्वभाव संयुक्तं, द्रव्यं ज्ञात्वा प्रमाणतः।
तत्त्व सापेक्ष सिद्धयर्थं, स्याद्नयै र्मिश्रितं कुरु ॥१॥

इहां फेरि प्रश्न भया-प्रमेय की अभेद सत्ता सब गुण मैं कही तौ गुण मैं गुण नहीं 'द्रव्याश्रय निर्गुणा गुणाः' यह फाकी सूत्र की झूठ होइ एक प्रमेय की अनंत सत्ता भई। एक गुण एक लक्षण व्यापक न रह्यौ।

ताकौ समाधान—सत्ता कौ एक है एक ही सत्ता मैं अनंत गुण का प्रकाश है। एक एक के प्रकाश गुण की विवक्षा करि गुण २ का सत ऐसा नाम पाया। सत्ता भेद तौ नांही; लक्षण एक एक गुण का जुदा है, लक्षण रूप गुण न मिलै तातैं सत्ता अनन्यत्व करि भेद नांव भया प्रथक भेद न भया। तातैं यह कथन सिद्ध भया। निश्चय सब का एक सत अनन्यभेद लक्षण गुण की अपेक्षा ओर नांव उपचार करि गुण २ का कल्पा तौ सत्ता भिन्न भिन्न न भई। तातैं नाना नय प्रमाण है, विरुद्ध नांही। एक प्रमेय अनंत गुण मैं आया, सो सत्ता एक ही अनंत गुण का प्रकाश तिसमैं एक २ प्रमेय प्रकाश सो ही प्रकाश प्रमेय का सब गुण मैं आया।

काहेते आया सो कहिए हैं। गुण एक एक के असंख्य प्रदेश वै ही है, तिनही मैं सब गुण व्यापक है। प्रमेय हू व्यापक है। तातैं प्रमेय सब प्रदेश व्यापक रूप विसतऱ्या तब सब गुण के प्रदेश सत में तिसके सत भया सो कहनें मैं नांव भेद पाया, ये प्रमेय के ज्ञानके ये दरसन के परिवे जुदे जुदे असंख्यात नाही वेही है। तातैं सब गुण का प्रदेश सत एक भया तातैं प्रमेय की अनंत सत्ता न भई। सत्ता तौ कल्पी और कही गुण के लक्षण जुदे के वास्तै मूल सत्ता भेद नांही अनंत गुण लक्षण रूप एक द्रव्य का प्रकाश अनंत महिमा मंडित सो है। वस्तु जनांवनें निमित जुदे जुदे दिखाये। गुण गुण की अनंत शक्ति अनंत पर्याय अनंत महिमा अनंत गुण का आधार भाव एक एक गुणमैं पाइये। प्रमेय पर्याय करि अनंत गुण मैं व्यापक होइ वर्तै है, सत्ता अनंत नांही। गुण गुण के लक्षण प्रणाम करवेजोग्य प्रमेय पर्याय तैं भये तातै प्रमेय विलास कहाया। अर गुण ही कौं गुणी कहिये तब सत्ता गुणी भया सत्ता कै सूक्ष्म गुण भया सत्ताका अगुरुलघुगुण भया। वस्तुत्व गुणी भया वस्तुत्व का प्रमेय गुण वस्तुत्व मैं है वस्तुत्व का अगुरुलघु सूक्ष्म अस्तित्व

प्रदेशवत्व वस्तुत्व मैं पाइये ऐसै अनंत गुण हैं जिस गुण का भेद कहिये तब तिस गुण मैं अनंत गुण का रूप संधै है। तातैं सब भेद जानैं तैं तत्व पावै है अरु अनंत सुख पावै है।

आगैं तीसरे प्रश्न को समाधान—

एक एक गुण एक एक लक्षण व्यापक है। पर्याय की अपेक्षा अनंत गुण व्यापक है जो पर्याय की अपेक्षा सब मैं न व्यापै तौ सब कौ नास होई। सूक्ष्म को पर्याय सबमैं न होय तौ सब स्थूल होय अगुरुलघु सबमैं न होय तौ सब हलके भारी होइ। प्रमेय सब मैं न व्यापै तौ प्रमाण करबे जोग्य न रहै। तातैं पर्याय गुण गुण का सब गुणमैं है। मूल लक्षण एक एक गुण का निज लक्षण पर्याय का धामरूप एक है। ऐसा प्रमेय का भेद है। पर्याय करि अनंत गुण व्यापक। प्रमेय मूलभूत वस्तु एक गुण जानौं ऐसा प्रमेय वान कहिए सरूप प्रमेय मैं रहै है सो प्रमेय वानप्रमेय कहिए।

—❀—

आगैं वस्तुत्व का वानप्रस्थ कहिए है

सामान्यविशेषरूप वस्तु है, वस्तु का भाव वस्तुत्व है।

वस्तु सामान्य विशेष धरै ताकौं कहिए—अनन्त गुण सामान्य विशेष रूप हैं। ज्ञान सामान्य सो जाननामात्र स्वपरकौं जानैं, ज्ञान यह ज्ञान का विशेष है। जाननमात्रमैं दूजा भाव न आवै तातैं सामान्य है। स्वपरके जाननेमैं सर्वज्ञ शक्ति प्रगटै है तातैं जाननमात्रमैं वस्तुका स्वभाव सधै है। स्वपर जाननां कहै ज्ञान की महिमा अनन्तशक्ति परजायरूप सब जानीपरै है। अनन्त गुणकी अनन्तशक्ति परजाय जानेतैं अनन्त गुण की अनन्त महिमा जानीपरी तब ज्ञानकरि तब सासता आतम पदार्थ की महिमा जांनी परी तब सब गुण द्रव्य की महिमा ज्ञान नै प्रगट करी। जैसे कोई कठेरा काठी बेचै है, वानै कबहू चिंतामणि रतन पाया तब अपनैं घर मैं धऱ्या, तब वाकरि प्रकाश भया। तब अपनी नारीकौं कह्या—याके उजियारेमैं रसोई करि, तेल तेल की गरज सरी। बिना गुण जाने बहुत काल लगि काठी ढोई। कबहू

कोई पारखी पुरुष आया तानें दयाकरि चिंतामणि की माहिमा बताई, तब वाका सब्द करि दारिद्र गया। जो पारखी पुरुष न जनावता, महिमा चिंतामणि की तौ छती महिमा अछती होती। तैसे अनंत संसार के जीव अनंत महिमा अनंत गुण की न जानै है तातै दुखी भये डोलै हैं। जब श्रीगुरु पारखी मिले तब अनंतगुण की अनंत महिमा बताई तब जिसने भेद पाया सो सत्तादारिद्र मेटि सुखी भया। ज्ञान करि जानी परी वाकी महिमा श्री गुरु ज्ञानतै जानि कही, ज्ञान वाके भये वाहूनै जानी। तातैं ज्ञान सब गुण की महिमा प्रगट करै है। ज्ञान प्रधान है। अनन्त गुण सिद्धन विषैं है ते हू ज्ञान करि जानै है। ज्ञान सब गुण कौं प्रगट करै है, तब तिनके गुणकी महिमा प्रगटै है। तातैं ज्ञानकी विशेषता कार्यकारी है। एैसें ज्ञानसामान्यविशेष करि ज्ञान वस्तु नाम पाया। ज्ञान वस्तुत्व का वान सरूप ज्ञान वस्तुत्व मैं रहै है, तहां ज्ञान वस्तुत्व वानप्रस्थ कहिये।

आगैं दरशनवस्तुत्व का वानप्रस्थ कहिये है।

दरशन देखनैंमात्र परणम्या दरसन का सामान्य स्वपरभेद जुदे देखै है यह दरशन

का विशेष है। दरशन न देखै परकौं तब सर्वदर्शित्व सक्ति न रहै। दरशन के अभाव होतैं निर्विकल्प सत्ता का अवलोकन न रहै अनंत ज्ञेय पदार्थ का निर्विकल्प सत्ता सरूप अवलोकन मिटता। तातैं दर्शनसामान्यविशेषरूप वस्तु तिसका भाव दरशन वस्तु है। तिसका वान कहिये सरूप तिसमैं तिष्टता सो दरशन वस्तुत्व वानप्रस्थ कहिये। ऐसें सब गुण का वस्तुत्व मिलि एक वस्तुत्व नाम गुण है तिसमैं रहना सो वस्तुत्व वानप्रस्थ कहिये।

आगे द्रव्यत्व वानप्रस्थ कहिये है

गुण पर्याय कौं द्रवै सो द्रव्य कहिये। द्रव्य के भाव कौं द्रव्यत्व कहिये। ज्ञान जानन रूप है सो आतमा का स्वभाव है। जो आतमा जानन रूप न परणवता तौं जानना न होता, जानना न भयें ज्ञान न होता, तातैं आतम के परनमन तैं ज्ञान भया, परनमन वा द्रवत्व गुण तैं भया। द्रवत्व गुण के भयें द्रव्य द्रवीभूत भया, जब द्रवीभूत भया तब द्रव करि परणाम प्रगट कीया। जब परणाम प्रगट्या तब गुण द्रव्य रूप परणया। गुण द्रव्य रूप परणया तब गुण द्रव्य प्रगटे। तातैं द्रवत्व गुण तैं सब का प्रगटना हैं ऐसे अनंतगुण कौं परणमै है। सो

द्रवत्व गुण तैं द्रव्य द्रवै तब तौ गुण परजाय प्रगटै अरु गुण द्रवै तब गुण परणति कौं धरि परणति सौं एक होइ परणति द्रवै तब दोउ मिलै परणति द्रवै तब गुण द्रव्य कौं वेदै सरूप लाभ ले द्रव्य द्रवै परणाम प्रगटै। गुण द्रवै तब एक एक गुण सब गुण मैं व्यापि अनंत कौ आधार होय है। सब गुण अन्योन्य मिलि एक वस्तु होइ। ये सब द्रव्य गुण परजाय जु हैं सो द्रवतै हैं। सामान्य रूप तौ द्रवणैरूप परणम्या विशेष द्रव्य द्रवणगुण द्रवण परजाय द्रवणा सो सामान्य विशेष द्रवणा मिलि द्रवत्व नाम भया। सो द्रवत्व अपनें स्वरूप मैं रहै सो द्रवत्व वानप्रस्थ कहिए। ऐसैं सब गुण का वानप्रस्थ भेद जानिये।

आगैं ऋषि, साधु, यति, मुनि ये भिक्षुक के भेद है सो कहिये है।

एक २ गुण में ये च्यारि भेद लागें हैं। **प्रथम सत्ता गुणमैं कहिये है**—तातैं सत्ता कौं रिषि संज्ञा होय सत्ता सासती रिद्धि कौं लीये है। आप अविनासी है। सत्ता के आधार उत्पाद व्यय

ध्रुव है। सत्ता अपनी सासती रिद्धि द्रव्य कौं दई तब द्रव्य सासता भया। गुण कौं दई तब गुण सासते भये। ज्ञान का जानपणा गुण, ज्ञान द्रव्य, ज्ञान परिणति परजाय। ज्ञान स्वसंवेदीज्ञान ज्ञेय ज्ञायक ज्ञान अपनैं आतमा के द्रव्य गुण परजाय का जाननहार ऐसें ज्ञानकौं सासता सत्ता गुणनैं कीया सो ज्ञान सत्ता है। ज्ञान सत्ता तैं ज्ञान सासता यह सासती रिद्धि ज्ञानकौं सत्ता गुणनैं दी है। दरशन का सत तैं दरशन सासता है। दरशन सब परभाव स्व-भावरूप सब ज्ञेयकौं देखै है, अपनैं आतमाके द्रव्य गुण पर्याय कौं देखै है। दरशन द्रव्य है, देखना गुण है, दरशनपरणति परजाय है। जो दरशन न होता तौ ज्ञायकता न होती, ज्ञायकता मिटै, चेतना का अभाव होता। तातै सकल चेतना का कारण एक दरशन गुण है। सर्व प्रशित्व महिमा कौं धरें दरशन है ताकौं सासता दरशन सत्ता नैं कीया यह सासते राखिवे की रिद्धि दरशन कौं सत्ता ने दीनी है तातैं तातैं सत्ता की रिद्धि दरशन मैं है।

आगे द्रव्यत्व गुणकौं सत्ता रिद्धि दी सो कहिये है।

द्रवत्व गुण करि द्रव्य गुण परजायन कौं द्रवै। गुण परजाय द्रव्यकौं द्रवै द्रवीभूत द्रव्यकै

भया तब द्रव्य परणया गुणनमैं द्रयें बिना परिणति न होती । द्रव्य सामता नित्य ज्यौं था त्यौं न रहता तब परिणति बिना उत्पाद कौ स्वरूप लाभ था सो न होता, व्यय न होता, तब परिणति स्वरूप निवास न करती ध्रुवता की सिद्धि न होती । उत्पाद व्यय बिना ध्रुव न होता तातैं परणतितैं उत्पाद व्यय, उत्पाद व्यय तैं ध्रुवसिद्धि, सो परिणति होना द्रवत तैं तातैं द्रव्य द्रया तब परिणति भई । गुण द्रये तब गुण परिणति गुणनतैं भई सब गुण का जुगपत भाव गुण परणति नैं कीया ।

यहां कोई प्रश्न करै है–कि जुगपत गुण की सिद्धि परिणति नैं करी तौ क्रमवरती तैं जुगपत भाव कैसैं सध्या ?

ताका समाधान–वस्तु जो है सो क्रम सहभावी भाव रूप हैं । गुण परिणति क्रम गुणका है । गुण लक्षण सहभावी है । सब गुण सहभाव क्रमभाव कौं धरै है । गुण अपनें लक्षण रूप सदा सासते हैं सो विन गुण के लक्षण कौं गुण परिणति सिद्ध करै है । द्रव्य गुणन में परणया तब गुणपरिणति भई । द्रव्य गुण रूप न परणवता तब गुण की सिद्धि न होती, यातैं

तैं गुण का सर्वस्वरस प्रगटै है। सर्वस्वरस प्रगटें गुण की सिद्धि है। गुण बिना गुणी नहीं गुणी बिना गुण नहीं, यातैं गुण परणतिबिना नहीं, परणति गुणबिना नहीं। यातैं क्रम परणति तैं जुगपत गुण की सिद्धि है। ऐसैं द्रव्यत्व गुणकौं सासती रिद्धि सत्ता नैं दी। तातैं सत्ता की रिद्धितैं द्रवत्वविलास की सिद्धि है। वस्तुत्वगुण वस्तु के भावकौं लीये है सो सासता है; सामान्यविशेष भावरूप वस्तुकी सिध्दि करै है। सब गुण अपना सामान्याबिशेषभाव धारि आप वस्तुत्वरूप भये। सामान्य प्रकाश विशेष प्रकाश सामान्यविशेष तैं है सो सामान्य विशेष का विलास सब गुण करै है, वस्तु संज्ञा सब धरै है, सो सामान्याविशेषरूप वस्तुत्व विलास की सिद्धि सत्ता गुण नैं सासत भाव दीया तातैं है सो सत्ता की रिद्धि सासताभाव सबकों दे है। वीर्यगुण कौं वीर्यसत्ता नैं सासताभाव दीया। वीर्य स्वस्वरूप निहपन्न राखवे की सामर्थ्यरूपगुण वीर्यगुण निहपन्न राखै, द्रव्य-वीर्य द्रव्यकौं निहपन्न राखै। सामर्थ्यता अपनी करि पर्याय वीर्यपर्यायकौं निहपन्न राखवेकौं समरथ, वीर्यगुण का विलास वीर्य अपार शक्ति धरि करै है। ताकी सिद्धि एक वीर्यसत्तातैं भई है। ऐसें एक सत्ता की रिद्धि सब गुण मैं विसतरी है, तब सब सासते भये। यह सत्ता

गुण की रिध्दि कही। ऐसी रिध्दि धारे है तातैं सत्ताकौं ऋषीश्वर कहिये।

आगैं सत्ताकौं साधु कहिये है।

मोक्षमार्गकौं साध सो साधु कहिये। सत्ता स्वपदकौं साधै। द्रव्यसत्ता द्रव्यकौं साधै, गुणसत्ता गुणकौं साधै, पर्यायसत्ता परजायकौं साधै, ज्ञानसत्ता ज्ञानकौं साधै, दरशन सत्ता दरशनकौं साधै, वीर्यसत्ता वीयका साधै, प्रमेयत्वसत्ता प्रमेयत्वकौं साधै, ऐसे अनंतगुणकी सत्ता अनंत गुणकौं साध, द्रव्यसत्ता गुणकौं साधै, गुणसत्ता द्रव्यसत्ताकौं साधै। परजायसत्तातैं पर्याय है। परजाय उतपाद व्यय ध्रुवकौं करैं। पर्याय बिना उतपाद व्यय ध्रुव (ध्रौव्य) न होय। उतपाद व्यय ध्रुव बिना सत्ता न होय, तातैं पर्याय सत्ता द्रव्यगुण कौं साधै। ज्ञानसत्ता न होय तो ज्ञान न होय। तब सब गुण द्रव्य पर्याय का जानपणा न होय। जानपणा न होय तब द्रव्य गुण पर्याय का सर्वस्व कौं न जानै। विनका सर्वस्व न जान्या तब ज्ञेय नांव भया। ज्ञान ज्ञेय अभाव भये वस्तु अभाव होय। दरशन सत्ता न होय तब दरशन का

अभाव होय। दरशन अभावतैं देखना मिटै, तब ज्ञानविशेष, बिना सामान्य न होय। तातैं सबकौं सामान्यविशेष सिद्ध करै हैं। बिना सामान्य, विशेष नहीं, बिना विशेष सामान्य नहीं। तातैं दरशनसत्तातैं दरशन, दरशनतैं ज्ञान, तब वस्तुसिद्धि है।

प्रमेयसत्ता न होय तौ सब प्रमेय न रहै। तब प्रमाण करवेजोग्य द्रव्य गुण पर्याय न होय। तातैं सत्ता सबकौं साधै है। ऐसैं अनन्तगुण की, द्रव्य की, पर्याय की सिद्धि करै है सत्तागुण। तातैं सो सत्ता ही साधक तातैं साधु ऐसा नांव पावै है।

आगैं सत्ता कौं यति कहिए।

असत विकार कौं जीत्या है तातैं यति कहिये। सत्तामैं असत्ता नांही तातैं यति। ताका विशेष लिखिये है—

सत्ता मैं नास्ति अभाव भया, नास्ति के विकार जीत्ये तातैं यति। ज्ञानसत्ता ज्ञान का नास्ति विकार मेट्या, दरशनसत्ता नैं दरशन का नास्तिपणा दूरि किया, वीर्यसत्ता नैं

अवस्तुत्व का अभाव कीया। या प्रकार सब गुण की सत्ता प्रतिपक्षी अभाव करि तिष्ठै है तातैं यति कहिए।

आगैं सताकौं मुनिसंज्ञा करि कहिये है

सत्ता अपनें स्वरूप का प्रत्यक्ष प्रकाश सासता लक्षण करि करै अथवा प्रत्यक्ष केवल ज्ञान सत्ता धरैं तातैं मुनि कहिये।

आगैं वस्तुत्वकौं रिषि आदि भेद लगाइये है

तामैं रिषिवस्तुत्व कौं कहिये-- सामान्यविशेषरूप वस्तु ताके भावकौं धरैं वस्तुत्व है सो सबमैं व्यापक है। सब गुणमैं सामान्यविशेषभावरूप वस्तुपणा करि रिद्धि वस्तुत्वनैं सबकौं दी है। जेते गुण हैं ते ते सामान्यविशेषतारूप हैं। ज्ञानमैं जानपणां मात्र सामान्यभाव न होय तौ लोकालोकप्रकाशकविशेष कहां तैं होय, तातै सामान्यतैं विशेष है, विशेष तैं सामान्य है। सामान्यविशेषभाव रिध्दि वस्तुतैं है। ऐसें ही दरशन

देखवेमात्र न होय तौ लोकालोक का निरविकल्प सत्तामात्र वस्तु न देखै, तातैं सामान्य विशेष धरें है। सब गुण सामान्यविशेषभाव रिद्धि धरे है। सो सब एक वस्तुत्व की रिद्धि फैली है। वस्तु द्रव्यरूप द्रव्यवस्तु गुणरूप गुणवस्तु पर्यायरूप पर्यायवस्तु सब वस्तुत्वतैं हैं। संसारमैं वस्तु न होय तौ नाम पदार्थ न होय।

इहां कोई प्रश्न करै है—शून्य हैं नाम शून्य भया वस्तु कहा कहोगे ?

ताकौ समाधान—एक शून्य आकाश है सो सामान्यविशेष लीये क्षेत्री वस्तु है। आकाश क्षेत्र मैं सब रहै हैं। दूजौ भेद यह जु अभावमात्र मैं सामान्य अभाव विशेष अभाव, सामान्यविशेष तौ है परि अभावमात्र है। सामान्यविशेष सामान्यविशेष वस्तुमैं जैसें तैसें अभावमैं कहिए। अभाव कौं शून्यता तौ है परि नाम सामान्यविशेष तैं अभाव कौं भयौ है। तातैं सब सिद्धि सामान्यविशेषतैं होय है। वस्तु के नाममात्र आवत ही सामान्यविशेषता तैं अभाव ऐसा नाम पाया। जो नास्ति तैं सिद्धि न होती तौ नास्तिस्वभाव स्वभावनमैं न होता। सत्ता अस्ति इति सत् सामान्यसत् नास्ति अभाव

सत् विशेष सत्ता का कहना भया। जो नास्ति का अभाव न होता तौ सत्तामैं आस्तिभाव न होता तातैं अभाव ही तै भाव भया है। वस्तु के प्रकाश कौं वस्तुत्व करै वस्तु जो है नास्ति नाही। वस्तु कौं ज्ञेय कहिए ज्ञायक कहिए ज्ञान कहिए सब प्रकाश एक चैतन्य वस्तु का है। वस्तुत्वपर्याय करि वस्तुत्व परिणामी है। परवस्तु करि अपरिणामी है। जीव वस्तु करि जीव रूप है। जड परवस्तु करि जीवरूप नाहीं है। चेतनमूरति चेतनावस्तुकरि है। अर जड़मूरति नाहीं तातैं अमूरति है। अपनें प्रदेश की विविक्षाकरि सप्रदेशी है। परप्रदेश नाही तातै अप्रदेशी है। वस्तु एक की अपेक्षा एक है। गुणवस्तु करि अनेक है। आपनें प्रदेश की अपेक्षा क्षेत्री है। पर वस्तु उपजनेंका क्षेत्र नाहीं। अपनीं पर्याय क्रियाकरि क्रियावांन है। परक्रिया न करै तातैं अक्रियावान है। वस्तुत्वकरि नित्य है। पर्यायकरि अनित्य है। आप अनन्तगुणकौं कारण है। आपकौं आप कारण है। जड़कौं अकारण है। आप परिणाम का आप कर्त्ता है। पर परिणाम का अकर्त्ता है। ज्ञानवस्तु की अपेक्षा सर्वगत है। पर की अपेक्षा निश्चयनय

परमैं न जाय तातैं सर्वगत है। अपनें प्रदेशलक्षण करि आपमैं प्रवेश आप करै है। निश्चयकरि परमैं प्रवेश नाहीं। वस्तुत्वकारि वस्तुत्व नित्य है। पर्यायकरि अनित्य है। वस्तुत्वकरि अभेद है। पर्यायकरि भेद है। वस्तुत्वकरि अस्ति है। पर्यायकरि नास्ति है। वस्तुत्वकरि एक है। पर्यायकरि अनेक है। वस्तुत्वकरि अभेद है। पर्यायकरि भेद है। वस्तुत्वकरि अस्ति है। पर्यायकरि नास्ति है। वस्तुत्वकरि एक है। पर्यायकरि अनेक है। वस्तुत्वकरि अनादि अनन्त, वस्तुत्वकारि अनादि पर्यायकरि सांत अनादिसांत, पर्यायकरि सादि वस्तुत्वकरि अनन्त सादिअनन्त, पर्यायकरि सादि सांत इत्यादि अनन्त भेद वस्तुत्व के हैं। अनन्त गुणकी महिमा वस्तुत्वतें है ऐसी रिद्धि वस्तुत्व धारे है तातैं रिषि कहिए !

—❀—

आगैं वस्तुत्वकौं साधु आदि कहिये है

वस्तुत्व सामान्यविशेषता देकरि सब द्रव्य–गुण–पर्याय कौं साधै है; आप परिणाम

करि आपकौं साधै है तातैं साधु कहिए है। अपनें भावमैं अवस्तुविकार न आवन दे तातै यति कहिए, विकार जीतैं तातैं यति। ज्ञानवस्तु अज्ञानविकार न आवनैं दे, दरशन अदरशनविकार न आवनैं दे, वीर्य अवीर्यविकार न आवनैं दे, अतेंद्री अनाकुल अनुभव-रसास्वाद-उत्पन्नसुख दुखविकार न आवनैं दे। गुण गुणका विकार अभाव भया तातैं सबगुणवस्तुत्व यति नाम पाया। ज्ञानवस्तुत्व सबकौं प्रतक्ष करै तातैं वस्तुत्वकौं मुनि कहिये।

आगैं अगुरुलघुकौ च्यारि रिषि आदि भेद कहिए है।

अगुरुलघुगुण अनन्तरिद्धिधारी हैं, न गुरु कहिए भारी न हलका; द्रव्य जैसे का तैसा अगुरुलघुतैं है। पर्याय जैसी की तैसी अगुरुलघुतै है। ज्ञान न हलका न भारी, दर्शन न हलका न भारी, वीर्य न हलका न भारी, प्रमेय न हलका न भारी, सब गुण न हलके न भारी। अगुरुलघुगुणकी रिद्धि सब गुणनमैं आई तातैं सब ऐसे भये।

षट वृद्धि हानि विकार अगुरुलघु तैं भया तातैं सब द्रव्य गुण की सिद्धि तातैं सब जैसे के तैसे पाइये सोई कहिये है—सिद्ध कै अनंतगुण मैं एक सत्तागुण रूप सिद्ध परणवै तहां अनंतवे भाग परणमन की वृद्धि कहिये। असंख्यातगुण मैं एक वस्तुत्व रूप परणवै ऐसा कहिये तब असंख्यात भाग परणमन की वृद्धि कहिये। आठ (गुण) मैं सम्यक्तरूप परणमै है ऐसा कहिये तब संख्यात भाग परणमन की वृद्धि कहिये। आठ गुण रूप परणमे है ऐसा कहिये तब संख्यात गुण परणमन की वृध्दि कहिये। असंख्यात गुण रूप परणमे है ऐसा कहिये तब असंख्यातगुण परणमन की वृध्दि कहिये। अनंतगुण रूप सिद्ध परणमे है ऐसा कहिए तब अनन्तगुणपरणमन की वृद्धि भई। ऐसें षट्वृद्धि भई। परणमन वस्तु मैं लीन भया तहां हानि भई। छै भेद वृद्धि मिटि गई तातैं हानि ऐसा नाम पाया। इन वृद्धिहानिकरि वस्तु ज्यों है त्यौं रहै है। षट्वृद्धिमैं सब गुणरूप परणया तब गुण का सरूप प्रगट परणये तै भया। न परणमता तौ गुण न प्रगटते

तातैं वृध्दिगुण कौ राखै है। हानि न होती तौ वस्तुका रसास्वाद ले परणाम लीन न होता। परणामलीनता बिना द्रव्य रसास्वाद सौं तृप्त न होता। तब रसास्वाद की तृप्ति बिना द्रव्य द्रव्य की स्पष्टता न धरता, तब द्रव्यपणा न रहता। तातैं द्रव्य के गुण के राखिवे कौं वृध्दि हानि द्रव्य मैं परणामद्वार है। तातैं अगुरुलघुतैं सब सिध्दि भई। यह सब सिध्दि करनैं की सिध्दि अगुरुलघु लीये है। अनन्तगुणद्रव्यपर्याय की सिध्दि अगुरुलघु नैं कीनी। तातैं ऐसी सिध्दि का धारक अगुरुलघुगुण रिषि कहिये।

आगैं अगुरुलघु कौं साधु कहिये—

यह अगुरुलघु सबकौं साधै है तातैं साधुसंज्ञा भई। वृध्दि हानि तैं गुण जैसे के तैसे रहै तब न हलके होई न भारी होय, तब सबका साधक भया तब साधु कहिये। आपकौं आपकी परणति तैं साधै तातैं साधु है।

आगैं अगुरुलघु कौं यति कहिये है—

हलका भारी विकार जीति अपने सुभाव निवसै है। जो हलका होता तो पवन मैं उडता भारी होता तौ अधोपतन होता, तातैं ऐसे विकार का अभाव करि आपकी जतीवृत्ति आप प्रगट करी। आपके विकार मेटे और गुण के विकार मेटै। जती आपका विकार मेटै, पर का विकार मेटै। तातैं यति संज्ञा अगुरुलघुकौं कहिये।

आगैं अगुरुलघुकौं मुनिसंज्ञा कहिये है—

आपकौं आप प्रतक्ष करै ज्ञान का अगुरुलघु मैं ज्ञान प्रतक्ष आया तब अगुरुलघु प्रतक्ष ज्ञान का धारी भया तातैं प्रतक्षज्ञानीकौं मुनिसंज्ञा है। तातैं मुनि अगुरुलघुकौं मुनि कहिये। ये च्यारि भेद अगुरुलघुमैं भये।

आगैं प्रमेयकौं च्यारिभेद लगाइये है सो कहिये है

प्रमेयत्वनैं सबकौं प्रमाण कहवे जोग्य कीये है। द्रव्य प्रमाणकरवेजोग्य

गुण प्रमाणकरवेजोग्य पर्याय प्रमाणजोग्य प्रमेयनें कीये है। प्रमेयबिनां वस्तु प्रमाणजोग्य न होय। अप्रमाण दूरि करनै कौं प्रमाण कीये तैं प्रमाणजोग्य प्रमेय गुण है। अनंतगुणमैं लक्षण प्रमाणकरवेजोग्य; प्रदेश प्रमाणजोग्य; सत्ता प्रमाण जोग्य, गुणकौ नाम प्रमाणजोग्य, क्षेत्र प्रमाणजोग्य, काल प्रमाणजोग्य, संख्या प्रमाणजोग्य, स्थान सरूप प्रमाणजोग्य, फल प्रमाणजोग्य, भाव प्रमाण (जोग्य) प्रमेयवस्तु (त्व) प्रमाणजोग्य, प्रमेयद्रव्यत्व प्रमाणजोग्य, प्रमेय अगुरुलघु प्रमाणजोग्य अनंतगुणप्रमेय प्रमाणजोग्य भये सो सब प्रमेय गुण की रिध्दि फैली है। प्रमेयतैं प्रमाणकी प्रसिध्दता है। प्रमाणतैं प्रमेय है। प्रमेय प्रमाण दोउनतैं वस्तु प्रसिध्द प्रगट ठहराइये है। जैसे तीर्थंकर सरवज्ञ वीतराग देवाधिदेव प्रमाणजोग्य है तिनकौ वचन प्रमाणजोग्य है। तैसे वस्तु प्रथम प्रमाणजोग्य है तौ गुण प्रमाण जोग्य होय। प्रमेय सब सरूप की सर्वस्वताकौं प्रमाण करवे जोग्य करै है। तातैं ऐसी रिध्दि अखंडित धारैं तातैं प्रमेय रिषि कहिये।

आगैं प्रमेय कौं साधु संज्ञा कहिये है—प्रमेयपरणाम करि आपरूपकौं आप साधैं तातैं साधु, सब गुण प्रमाणकरवेजोग्यता करि साधैं तातैं साधु है। प्रमेय विकार कौं आवनै न दे तातैं यति। दरशन का अदरशनविकार दरशनप्रमेय न आवनै दे। ज्ञान का अज्ञानविकार ज्ञानप्रमेय न आवनै दे। वीर्य का अवीर्यविकार वीर्यप्रमेय न आवनैं दे। अतेन्द्री अनंतसुख भोग का इन्द्री नितसुखादिदुखविकार सो अतेन्द्री-भोगप्रमेय न आवनै दे। सम्यक्त निर्विकल्प यथावत सम्यक् निश्चयरूप निजवस्तु का सम्यक्त ताका विकार मिथ्यातकौं सम्यक्तप्रमेय न आवनैं दे। ऐसे अनंतगुणविकारकौं अनंतगुणप्रमेय न आवनैं दे। एक यतीपद प्रमेय न (ने) धर्‍या तातै विकारता प्रमेय नैं हरी तातैं यती प्रमेयकौ कहिये। प्रमेय ज्ञान का तामै अनंतज्ञान आया तातैं मुनि प्रमेयकौ कहिये। सब गुण कौ ज्ञान प्रत्यक्ष कीया, ज्ञान प्रमेय मैं ज्ञान तातैं प्रमेय मुनि भया।

ऐसैं ज्ञानगुणकौं च्यारि भेद कहिये है

ज्ञान कौं रिषि संज्ञा काहेतैं भई सो कहिये है—ज्ञान आपणां जानपणां का स्वसंवेदन विलास लीये है। ज्ञानके जानपणां है तातैं आपकौ आप जानै है। आपके जानै आप सुद्ध है। आनंदअमृतवेदना ज्ञानपरणतिद्वार तै आपही आप आपमैं अनायरसास्वादु ले हैं। जिसके उपचारमात्रमैं ऐसा कहिये। ज्ञानमैं तिहूं काल संबंधी ज्ञेयभाव प्रतिबिंबित भये सर्वज्ञता भई। लोकालोक असद्भूत उपचार करि ज्ञानमैं आये। ज्ञान अपने सुभाव करि थिर है, जुगत है, अखण्ड हैं, सासता है, आनन्दविलासी है, विशेष गुण है, सबमैं प्रधान है। अपने पर्यायमात्रकरि अनन्त पदार्थ का भासक है। वीर्यगुण दर्शनकौं निराकारनिहपन्न राखवे की सामर्थ्यता धरे। ज्ञान-निहपन्न राखवे की सामर्थ्यता धरें। प्रमेयनिहपन्न राखवे की सामर्थ्यता धरें। प्रदेशनिहपन्न राखवे की सामर्थ्यता धरें। सब द्रव्यगुणपर्यायनिहपन्न राखवे

की सामर्थ्य धरें सो जो ज्ञान न होता तौ ऐसे वीर्य की सकल अनन्तशक्ति अनन्तपर्याय अनन्तनृत्यथटकलारूप सत्ताभाव रस तेज आनन्द प्रभावादि अनन्त भेदभावकों न जानता। जब न जानै तब देखना न होता। देखना न भये अद्रसि (अदृश्य) भया। जब अद्रश्य भया तब अभाव होता। तातैं ऐसे वीर्य कौं ज्ञान ही प्रगट करै है। अरु प्रदेशगुण असंख्यातप्रदेश धरे हैं। एक २ प्रदेशमैं अनन्त २ गुण हैं। एक २ गुण असंख्यात प्रदेशी अनन्त पर्याय अनंत शक्तिमंडित सत्तासद्भाव वस्तुत्व भाव अगुरुलघुभाव सूक्ष्मभाव वीर्यभाव द्रव्यत्वभाव अवगाहभाव प्रमेयत्वभाव अमूर्त्तभाव प्रभुत्वभाव विभुत्वभाव तत्वभाव अतत्वभाव भावभावें अभावभाव एकभाव अनेकभाव अस्तिभाव सुद्धभाव नित्यभाव चैतन्यभाव परमभाव निजधरमभाव ध्रुवभाव आनंदभाव अखंडभाव अचलभाव भेदभाव अभेदभाव केवलभाव सासतभाव अरूपभाव अतुलभाव अजभाव अमलभाव सविकारभाव अछेदभाव अमितभाव प्रकाशभाव अपारमहिमाभाव अकलंकभाव अकर्मभाव अघटभाव अखेदभाव निर्मलभाव निराकारभाव निहपन्नभाव निःसंसारभाव नास्ति

अन्य त्वभावतैंरहितभाव कल्याणभाव स्वभाव पररहितभाव चेतनागुणसौं व्यापक भाव ऐसे अनंतभाव एक एक गुण धरे है । ऐसे अनंत अनंत गुण एक एक प्रदेश धरें सो ज्ञाननै वै प्रदेश जानें तब प्रगटे बिना ज्ञान विन प्रदेशन की सकल विशेषता कौं न जानता। तातैं प्रदेश महिमा जानवे कौं ज्ञान हैं। सत्तागुण सामतलक्षणकौं धरें द्रव्यसत् गुणसत पर्यायसत् अगुरुलघुसत् सूक्ष्मसत अनंतगुणसत् महासत् अवांतरसत एकपर्यायसत् अनेकपर्यायसत् विश्वरूपसत् एकरूपसत् सर्वपदार्थ-स्थितिसत् एक एक पदार्थस्थितिसत त्रिलक्षणसत् अत्रिलक्षणसत् ऐसे सत्ताभेद ज्ञान जानै है तब प्रगटै है । तातैं प्रधान हैं । सूक्ष्म के भेद द्रव्यसूक्ष्म गुणसूक्ष्म पर्यायसूक्ष्म ज्ञानसूक्ष्म दरशनसूक्ष्म वीर्यसूक्ष्म सुखसूक्ष्म अगुरुलघुसूक्ष्म द्रव्यत्वसूक्ष्म वस्तुत्वरूपसूक्ष्म ऐसैं अनंतगुणसूक्ष्मभेद ज्ञान प्रगट करै है । तातैं ज्ञान प्रधान है । ऐसैं अनंतगुण के अनंत अपार महिमा मंडित भेद ज्ञान प्रगट करै है। तातैं ज्ञानम ऐसी ज्ञायकरिद्धि है तातैं ज्ञान रिषि कहिये।

आगै ज्ञानकौं साधु कहिये है—ज्ञान अपनी ज्ञायकपरणति करि आपकौं आप साधै। अनन्तज्ञानमैं सब व्यक्त भये तातैं सब प्रगट कीये। तातैं सबके प्रगटभाव करणें का साधक है तातैं साधु। ज्ञानकरि सरूपसर्वस्व सधै। आतमज्ञान ही तैं सर्वज्ञ-महिमाकौं पावै है। ज्ञान सकल चेतनामैं विशेषचेतना है तातैं सरूपसाधन है। आतमाकै परमप्रकाश ज्ञानही का बडा है प्रधानरूप है, तातैं सब प्रभुत्व साधक है। ज्ञान अनंत अविनासी आनंद का साधक है सो ज्ञानकी साधकता क्रमकरि न है, जुगपत साध्यसाधकभाव है, काहेतैं एक बार सबका प्रकाशक हैं। यातैं जे ज्ञान भाव साधु भला समझैंगे तो अविनासी नगरी का राजा होहिगे। तातैं ज्ञानकौं साधु जानि सब जीव सुख पावो।

आगैं ज्ञानको यति कहिये—ज्ञान अज्ञानविकार के अभावतैं सुद्ध है। इस संसारमैं सब जीव अनादिकरमयोगतैं परकौं आप मानि मोहित होइ दुखी भये सो एक अज्ञान की महिमा तातैं जन्मादिदुखतैं व्याकुल हैं। ता अज्ञान

विकारकौं मेटया तब पूर्व कथित ज्ञान प्रभाव प्रगटया तातैं अज्ञानविकार जीत्या तातैं ज्ञान यति भया। ऐसे ज्ञान यतिभावकों जानें तौ ऐसे ज्ञान यतिभावकों पावै, तातैं ज्ञानयतिभाव जानना जोग्य है।

आगे ज्ञानकौं मुनि कहिये है—ज्ञान प्रतक्ष का धारी मुनि है सो ज्ञान आपरूपही है। औरकौं प्रतक्ष जानैं हैं तातैं मुनि है।

★

आगैं दरशनकौ ऱ्यारिभेद कहिये है

दरशन रिषि है। दरशन देखवेमात्र है। उपचारतैं लोकालोककौं देखै है, अनंतगुणकों देखै है, द्रव्यकौं देखै है परजायकौं देखै है। जो दरशन न होता तौ द्रव्य अदरशि होता तब ज्ञान कौंनकौं जानता। ज्ञान न जानता तब परणमन न होता तब दरशन ज्ञान चारित्र का अभाव भयें वस्तु का अभाव होता। तातैं दरशन देखनैं रिद्धितैं सब सिद्धि है। ज्ञानकौं न देखता तौ

ज्ञानका सामान्यभावकौं अद्राशिता आवती, तब सामान्य अद्दशि भयें विशेष भी न होता। सामान्यविशेष का अभाव भयें वस्तु–अभाव होता तातैं ज्ञानकी सिद्धि दरशन की रिद्धितै है। सत्ताकौं न देखना तब सामान्यभाव अद्राशि भयें विशेषता जाती तब सत्ता न रहती। वीर्यकौं न देखता तब वीर्य भी सत्ता की नाईं अद्राशि भयें नाश होता। ऐसैं अनन्तगुण दरशन के देखवेमात्र रिद्धितें सिद्धिभये देखनां निर्विकल्प-रसकौ प्रगट करै है। जहां देखना तहां जानना, जानना तहां परणमना। तातैं दरशन के देखिवेतैं उपयोगारिद्धि है। एक गुणके अभावतैं सब अभाव होय, तातैं दरशन अपनी रिद्धितैं सबकी सिद्धि करै है। दरशन सर्वदरशी है। दरशन असाधारणगुण गुण (") है। दरशन मुख्य चेतना है। दरशन प्रधान है, तातैं दरशन ऐसी रिद्धि के धारे तैं रिपि कहिये है।

आगै दरशन साधु कहिये है—दरशन दरशनपरणति करि आपकौं आप साधै है। और के देखनेंकरि विनकौं प्रगट करणा साधै आप सबकौ देखै। दरशनकरि आतम

देखे तातैं सर्वदरशीपणा कौं आतमामैं साधै। अपने देखनैंभावकरि जानना ज्ञान का होइ। काहेतैं यह सामान्यविशेषरूप सब पदार्थ का निर्विकल्पसत्ता अवलोकन दरशन करै, सो ज्ञानमैं तौ निर्विकल्प सत्ता अवलोकन नहीं तातैं यह दरशन का भाव है। जो सामान्य न होय तौ विशेष ज्ञान न होय सब अद्राशि भयें ज्ञान किसका होय। तातैं द्राशि (श्य) दरशनतैं भयें अद्रशिपणां मिट्या। ज्ञान भी विशेष ज्ञाता भया। ज्ञान-दरशन का जुगपतभाव है। तातैं दरशन सारे गुणकौं प्रगट करि साधै तातैं साधु है।

आगे दरशन कौं यति कहिए है—दरशन अदरशन विकार दूरि कीया है। जो विकार रहता तौ सर्वशक्ति दरशनमै न होती। विकार जीतैं जती भया। दरशन विकार कौं सुध्दतामैं न आवनैं दे। सकलसुध्दता दरशन की मैं अतीचार भी न लागै ऐसी निराकार शक्ति प्रगटी तातैं यति भया।

आगैं दरशनकौं मुनि कहिये है—दरशनमैं ज्ञानभी दरस्यागया तहां केवल दरशनमै केवलज्ञानका अवलोकन भया तब प्रतक्षज्ञानीकौं मुनिसंज्ञा है। दरशन अनंत-

गुणकौं प्रतक्ष देखै है। जो प्रतक्ष करै ताकौ मुनि कहिये है। तातैं दरशनकौं मुनिसंज्ञा कहिये। ऐसैं सबगुणमैं च्यारि २ भेद जानने।

आगैं परमातमराजा कै अमराव अनन्त है ग्याहमैं केनायेक नाम लिखिये है

प्रभुत्वनाम, विभुत्वनाम, तत्वनाम, अमलभावनाम, चेतनप्रकाशनाम, निजधर्मनाम असंकुचितविकासनाम, त्यागउपादानशून्यत्वनाम, परणामशक्तित्वनाम, अकर्तृत्वनाम, कर्तृत्वनाम, अभोक्तानाम, भोक्तानाम, भावनाम, अभावनाम, साधारणप्रकाशनाम, असाधारणप्रकाशकर्त्तानाम, करमनाम, करणनाम, संप्रदाननाम, अपादाननाम, अधिकरणनाम, अगुरुलघुनाम, सूक्ष्मनाम, सत्तानाम, वस्तुत्वनाम, द्रव्यनाम, प्रमेयत्वनाम, इत्यादि अनंत हैं। अपनें अपनें औधे का काम सब करै है। इनका विशेष आगे कहेंगे।

प्रदेशदेसनमैं गुण जो पुरुष कहे अर गुणपरणति नारी कही तो विलास कैसैं करै हैं सो कहियं है—

वीर्यगुण नर के परणति वीर्य की नारी सो दोउ मिलि भोग करै है सो कहिये है। वीर्य के अनंत अंग है, सत्तावीर्य, ज्ञानवीर्य, दरशनवीर्य, प्रमेयवीर्य ऐसे अनंतगुणके अनंत वीर्यरूप अनंत अंगकरि अपनी नारी जु परणति ताके भोगकों करै। ऐसे सब अंगमें वीर्य परणति परणई। वीर्य परणति का अंग वीर्य नरसौं व्याप्य व्यापक भया तब दोऊ अंग के मिलनतैं अतेन्द्री भोग भया तब आनंद पुत्र भया। तब सब गुण परिवारमैं वीर्यशक्ति फैलि रही थी, तातैं वह वीर्य की शक्तिते निहपन्न थे। याके पुत्र भयें सब गुण वीर्यअंग था, वीर्य-अंग परिफूलित भये तब सब गुण परिफूलित भये तातैं सब गुणनर मैं मंगल भया। ऐसैंही ज्ञान नर मंत्र पदका का धणी था यह अपनी ज्ञान परणतिसौं मिलि भोग करै है ताका वरणन कीजिये है—

ज्ञान अनंतशक्ति स्वसंवेदरूप धरैं लोकालोक का जाननहार अनंतगुणकौं जानैं। सत परजाय सत वीर्य सत् प्रमेय सत् अनंतगुणके अनंत सत् जानै अनंत महिमा निधि ज्ञानरूप ज्ञान ज्ञानपरणति नारी ज्ञानसौं मिलि परणति ज्ञान का अंग २ मिलनतैं ज्ञान का रसास्वाद परणति ज्ञान की ले ज्ञान परणतिका विलास करै। जाननरूप उपयोग चेतना ज्ञानकी परणति प्रगट करै। जो परणति नारी का विलास न होता तौ ज्ञान अपनें जानन लक्षणकौं यथारथ न राखि सकता। जैसैं अभव्यकै ज्ञान है ज्ञानपरणति नहीं। तातैं ज्ञान यथारथ न कहिये। तातैं ज्ञान ज्ञानपरणतिकौं धरै तब यथारथ नांव पावै। तातैं ज्ञानपरणति ज्ञान यथारथ प्रभुत्व राखै है। जैसे भली नारी अपनें पुरुष के घर का जमाव करै है तैसें ज्ञान स्ववानसुखजुक्त घर ज्ञानपरणति करै है। ज्ञानपरणति ज्ञान के अंगकौ वेदि वेदि विलसै है। ज्ञानकै संगि सदा ज्ञानपरणति नारी है। अनंतशक्ति जुगपत सब ज्ञेय जाननकी ज्ञानमैं तौ है परि जब ताईं ज्ञानकै

परणति नारीसों भेंट न भई तब तांई अनंतशक्ति दबी रही। यह अनंतशक्ति परणति नारी नैं खोली है। जैसैं विशल्या नैं लक्ष्मन की शक्ति खोली तैसैं ज्ञानपरणतिनारीनैं ज्ञान की शक्ति खोली। ऐसैं ज्ञान अपनी परणतिनारी का विलास अपनैं प्रभुत्वका स्वामी भया। परणतिनैं जब ज्ञान वेद्या वेदतां भोग अतेन्द्री भया तब ज्ञानपरणति का संभोग ज्ञानपुरुष कीया तब दोऊके संभोगयोगतैं आनंद नाम पुत्र भया तब सब गुण परिवार ज्ञानमैं आये थे सो ज्ञानकै आनंद पुत्र भये हर्ष भया सबकै हर्ष मंगल भया।

आगै दरशनगुणकै दरशन परणति नारी है सो अपनी नारी का विलास दरशन करै है सो कहिये है—

दरशन परणति नारी दरशन अंगसौं मिलै है तब दरशन अपनैं अंग करि विलसैं है। दरशनतैं नारी है नारीतैं दरशन सरूप सधै है। दरशनपरणति नारी का सुहाग भी दरशनपातिसौं मिलै है। जब तक दरशनसौं दूरि थी

तब तक निर्विकल्प रस न पावै थी—व्याकुल रूप थी। तातैं अनंतसर्वदर्शित्व शक्ति का नाथ अपना पति भेंटतही अनाकुल दसा धरै है। ऐसी महिमा बंठे है। सारा वेद पुराण जाकौ जस गावै है दरशन वेदैं तब वा परणति सुद्ध परणतितैं दरशन सुद्ध दरशनकै अनुसार परणति है। परणति के अनुसार दरशन है। परणति जब दरशन धरै आप आपमैं तब सुखी है। दरशन अपनी परणति न धरै तब आप अति असुद्ध भया तब सुद्धता न रहै। परणतिकौं दरशन बिनां विश्राम नहीं। दरशनकौं परणतिबिनां सुख नहीं—सुद्धता नहीं। परणति दरशन के वेदिवे गुणका प्रकाश राखै है। न परणवै तौ देखना न रहै। दरशन न होय तौ परणतिकिसके आश्रय होइ किसकौं परणवै। यह परणति दरशनपतिसौं मिलि संभोगसुख ले है। दरशनपरिणति कौं अपने अंगसौं मिलाय महासंभोगी हूवा वरतै है। तहां दोउ के संभोग करि आनन्दनाम पुत्र की उत्पत्ति होइ है। तब सब गुण परिवार महाआनंदी भये मंगल कौं करै है। तातैं इस नारी का पुरुष का विलास वरणन करवे कौं कौन

समर्थ है ।

आगैं द्रव्य नर अपनी परणति तिय का संभोग करै है सो कहिये है—

द्रव्य आप द्रवत तैं नाम पाया है। द्रव्य जब द्रवै है तब गुण परजाय की सिद्धि द्रव्य अपनैं अन्वयी गुण कौं द्रवै व्याप है क्रमवर्ती परजाय कौं द्रवै है तातैं द्रव्य है। द्रयेंवे बिना परणति न होती, परणयें बिनां गुण न होते तब द्रव्य (का) अभाव होता तातैं द्रवनां द्रव्यकौं सिद्ध करै है। द्रवत गुण द्रवरूप परणतितैं है। जो द्रवरूप न परणवता तौं द्रव न होता तब द्रव्य न होता। तातैं परणति द्रवतकौं कारण है। तातैं परणतिनारीतैं द्रवतपुरुष की सिद्धि है। द्रवत अपनी परणतिनारी का अंग विलसै है। परणतिनारी वतपुरुषकौं विलसै है। द्रवत सब गुण मैं है सो सब गुण के द्रवत के सब अंग एकबारमैं परणतितिया

विलसै है। जब सब गुण के द्रवत मैं विलसी तब सब गुण के द्रवत आधार सब गुण थे। ऐसे द्रवत के विशेष विलास की करणहारी भई। परणति मिलें द्रवत की सिद्धि तातें परणतिनारी का विलास द्रवतकौं अनंतगुण का आधार पदकौं थापै है।

प्रश्न—द्रवत परणति सब गुणमैं पैठी इहां द्रवत ही का विलास काहेकौं कहौ? सब गुण कहौ सब गुण की परणति कहौ।

ताको समाधान—सब गुण मैं तो द्रवत भया द्रवत की परणति द्रवत की साथि भई। तातैं द्रवत की परणति द्रवतमैं कहिये अनन्तगुण की परणति अनन्तगुण मैं कहिये। कोऊ गुण की परणति कोऊ गुण मैं न कहिये। जिस गुणकी परणति जिस गुण मैं कहिये तिस गुण के द्वार सबगुण मैं आवो और गुणमैं कहिये तब और गुण की भई। तातैं द्रवत के द्वार द्रवत की हैं तातैं परणति का परम विलास परम है अनंत अतिसय कौं लीये है। द्रवत गुणपुरुष अपनी परणति का विलास करै है सो महिमा

अपार है। सारसुख उपजै है। इन दोउ के संभोगतैं आनन्द नामा पुत्र भयो है तहां सब गुणपरिवार कै परममंगल भयौ है।

आगैं अगुरुलघु अपनी परणतितिया का विलास करै है सो कहिये है।

अगुरुलघु का विकार षट्गुणी वृद्धिहानि है। षट्गुणी वृद्धि अपनैं अनन्तगुण मैं परणवनतैं होय है। अनन्तगुण परणवन मैं अनन्तगुण का रस प्रगटै है। अनन्त भेद-भाव कौं लीयें अनन्तरस अनन्तप्रभुत्व अनन्तअतिसय अनन्तनृत्य अनन्तथटकलारूप सत्ताभाव प्रभाव विलास ता विलासमैं नवरस वरतै हैं। सो सब गुण गुण का रस नव षट्गुणीवृद्धि मै सधै है सो कहिये है।

सत्तागुण मैं नवरस साधिये है—प्रथम सत्ता मैं सिंगार रस साधिये है। सत्ता सत्तालक्षण कौं धरैं है। सत्ताकौ सिंगार अनन्तगुण है। सत्ता सासती हैं। सत्तानै ज्ञान

सब ज्ञेय कौं ज्ञाता अनन्तगुण ज्ञाता जानन प्रकाश सर्वज्ञशक्तिधारी स्वसंवेदरसधारी अनन्त महिमा निधि सब अनन्त द्रव्यगुणपर्याय जामैं व्यक्त भये एसौ ज्ञान आभूषण सत्ता पहर्‌यौ सत्तासिंगार भयौ। निर्विकल्पदरशन निर्विकल्परसधारी अविकारी भेदविकल्प कौ अभाव जामैं सकल पदार्थ कौ सकल सामान्यभावदरसी सत्तामात्र अवलोकी ऐसौ आभूषण सत्ता पहर्‌यौ तब यह सिंगार सत्ता कौ भयो। वीर्य सब निहपन्न राखवे समर्थ सो सत्ता धर्‌यौ तब सत्ता की सोभा भई। प्रमेयगुण सबकौं प्रमाण करवेजोग्य सब जातें प्रमाण भये सो सत्तानें धर्‌यौ तब सत्ता प्रमाणरूप भई तब सोभाई। तब सत्ताकौं सिंगार है अगुरुलघु सत्तानैं धर्‌यौ तब सत्ता हरुई (की) भारी न भई तब सत्ता अपनें सुद्धरूप रही तब भली लागी तब सत्ता की सोभा भई। ऐसै अनंतगुण सत्तानैं धरें आपमांहि तब सत्ताके आभूषण सब भये सो ही सिंगार जानौ।

इहां कोई प्रश्न करै—गुणमैं गुण नहीं, सत्ता अनंतगुणधारी काहे कही ?

ताकौ समाधान—सत्ताके है लक्षण की अपेक्षा सब हैलक्षणरूप गुण हैं।

हैलक्षण सत्ताकौ है यातें सत्तामैं आये। द्रव्यतौ सब गुणके सब लक्षणकौ आधार है। सत्ता एक हैलक्षण करि आधार ऐसा भेद विविक्षातैं प्रमाण है। ऐसैं सत्ता सब रूप आभूषण बनावकरि सिंगारकौं धरि सोभावती है। सत्ता द्रव्य गुण पर्याय के विलास भाव विलसै है। सब विलासरस सत्तामैं है तातैं सिंगाररस सत्तामैं भयौ। सत्ता अरु सत्तापरणति दोउकी रसवृत्ति प्रवृत्ति सिंगार है। सत्ता परणति सत्ताकौं वेदै तब रस निहपत्ति होई अरु सत्ता अपणी परणति धरै तब आपही परणति रसकौं धरै तब दोउके मिलापतैं आनंदरस होय सो सिंगार है।

आगें वीररस सत्तामैं कहिए है—सत्तातैं प्रतिकूल का अभाव सत्तानै कीया अपनी वीरवृत्ति करि ऐसी वीर्यशक्ति सत्ता मैं है तिसतैं सत्ता सासती निहपत्ति धरै है। है विलास द्रव्य गुण परजाय का वीर्य तैं सत्ता करै है तातैं वीर्यरस मैं है। जेते गुण हैं अपनें अपनें प्रभाव कौं धरै है ते ते सब गुण मैं सासताभाव विकाशभाव आनंदभाव वस्तुत्वभाव प्रकाशभाव अबाधितभाव ऐसे अनन्तभाव वीरत्व मैं आये शक्ति तैं वीर्य की

यातैं वीर्यरस मैं सबके राखणें का पराक्रम आया तातैं वीररस सत्ता मैं भया । सत्ता तातैं सबकौं हैभाव दीया । निहपत्ति वीर्य नैं करी तातैं वीररस सत्ता मैं कहिये ।

आगे करुणारस सत्ता मैं कहिए है—सत्तामैं करुणा है । काहेतैं सत्ता हैभाव और गुणकौं न देता तौ सब विनसते, तातैं अपनां हैभाव सबकौ देकरि राखे तब करुणा सधी तातैं करुणरस सत्तामैं आया ।

आगैं सत्तामैं वीभत्सरस कहिए है—सत्ता अपने हैभाव के प्रभाव का विलास बडा देख्या तब और प्रतिकूलभाव सौं ग्लानि भई तब प्रतिकूलभाव न धरय तब वीभत्स कहिए ।

आगैं भयरस सत्तामैं है सो कहिये है—सत्ता ऐसे भय कौ धरें है, असत्तामैं न आवै सो भय कहिए ।

सत्ता हास्यकौं धरें है सो कहिये है—दरशन ज्ञानपरणति करि जो उल्हास आनंद करै दरशन ज्ञान चारित्र की सत्ता सो ही हास्य नाम जानना ।

आगैं रौद्ररस कहिये है—सत्ता असत्ता प्रतिकूलताकौं अपनें वीर्यतैं जीति सदा रहै है तहां सदा परभाव का अभाव करणां। परके अभावरूप भाव सो ही रौद्ररस है।

आगैं अद्‌भुतरस कहिए है—अद्‌भुतता सत्तामैं ऐसी है–साकारज्ञान है, निराकार दरसन है, दोऊ की सत्ता एक है। यह अद्‌भुतभावरस है।

शांतरस—सत्ता मैं और विकलप नहीं स्व शांतरूप है तातैं शान्तरस है।

ऐसै नंऊ रस एक सत्ता मैं सधै है। ऐसैं ही अनन्तगुणन मैं नवों रस सधै है सो जानियो। रसयुक्त काव्य प्रमाण है। जैसैं भोजन लवणरस सौं नीको लगै तैसैं काव्य रस सहित भला लगै। तैसे अनन्तगुण अपनें रसभरे सोभा पावै तातैं रस वर्णन कीयौ।

आगैं गुणपुरुष गुणपरणतिनारि का विलास कैसैं करै है सो कहिये है।

ज्ञानगुण अपनी ज्ञानपरणति का विलास करै है। ज्ञानके अंग मैं परणति का अंग

आया तब अविनासी अखंडित महिमा निज घर की प्रगटी । ज्ञान का जुगत भाव परणति नै वेद्या तब एकतारस उपज्या । परणति ज्ञान मैं न होती तौ अनन्तशक्तिरूप ज्ञान न परणवता तब महिमा ज्ञान की न रहती । तातैं ज्ञान निज परणति धरि विलास ज्ञान करै है । ज्ञान मै जानपणां था सो परणति परणई तब जानपणां वेद्या । तब ज्ञानरस प्रगट्यां ज्ञानमैं अतीन्द्रियभोग परणतितिया के संजोगतें है । तातें ज्ञान अपणी नारी का विलास करै है । तहां आनंद पुत्र होय है । ऐसैं अनंत गुणपुरुष सब अपणी गुणपरणति का विलास करै है । सब गुण का सरवस्व परणति सब गुण की है । वेद्यवेदकतारूप रस सब परणतितैं सबमैं प्रगटै है ।

प्रश्न—एक गुण सब गुण के रूप होइ वरतै है । तहां सब गुण की परणति नैं सबका विलास कीयाक न कीया ?

ताका समाधान—गुणरूप परणति जिस गुण की है तिसही की है और की नाहीं । विनमैं जो परजाय द्वारकरि व्यापकता करी है तिस परजायरूप अपनें अंग मैं

परणवै है तिस विलास कौं करै है। तातैं अपनें अंग गुण के है ते ते विलसे है। गुण निज पुरुष जो है ताकौं विलसै है। जो यौं न होय तौ और गुण की परणति और गुण रूप होइ तब महादूषण लागै। तातैं अपनी परणति कौं गुण जो है सोही विलसैं है। यहां अनन्तसुख विलास एक २ गुणपरणतितिया जोगतैं करै है। सब याही प्रकार विलास करै है। अनन्त महिमा कौं धरै हैं ऐसै परमातम राजा के राज मैं सब गुणपुरुष नारी अनन्त विलास कौं करि सुखी हैं।

दरशन मंत्री परमातम राजा कौं कैसैं सेवै है सो कहिये है।

परमातमराजा की प्रजा अनन्तगुण शक्ति परजाय सकल राजधानी दरशन देखवे तैं दरसि भई तब साक्षात भई। दरशन न देखता तब अदरसि भयें ज्ञान कहां तें जानता। देखनें जानने मैं न आवै तब ज्ञेय वस्तु न होय तब सब परमातम का पद न

रहता । तातैं दरशन गुण देखि देखि सकल सर्वस्व कौं साक्षात करै है । ज्ञान कौं देखै है तब ज्ञान अदरसि न होय है तब ज्ञान का अभाव न भयें सदभाव ज्ञान का रहै है। वीर्य कौं देखै है तब वीर्य अदृश्य न होय है तब ज्ञान वीर्य कौं जानैं है तब साक्षात होय है । ऐसैं अनंतगुण परमातमा के राखवे कौं दरशन कारण है। दरशन निराकार रूप नित्य है सो निराकार शक्ति जनावै है ।सामान्य सत् निर्विकल्पपनैं अवलोकै है। तामैं निरविकल्पसेवा दरशन की है जो ऐसी निरविकल्प सेवा दरशन न करता तौ निरविकल्प सत् न रहता । साक्षातकार निरविकल्पता दरशन नैं दिखाई है । निरविकल्प ही वस्तु का सर्वस्व है । प्रथम सामान्यभाव होई तौ विशेष होइ।सामान्यभाव बिना विशेष न होय। सामान्य विशेषकौं लीये हैं । तातैं दरशन निरविकल्प प्रगट करै है तहां विशेष की भी सिद्धि होय है। काहेतैं, सामान्य भये विशेषनांव पावै है । तातैं वस्तु की सिद्धि दरशन करै है । ऐसी सेवा करै है । दरशन सब गुणमैं बहोत बारीकीकौं धरै है । काहेतैं, विशेषमैं बहु पावै दरशन सामान्य अवलोकन मात्रमैं सब सिद्धि तो है

परि याकौ अंग अतिसूक्ष्मरूप निरविकल्पदमारूप निराकाररूप अक्रियरूप अमूरतिरूप अखंडितरूप तामैं गम्य जब होइ तब सब सिद्धि होय। बिरला जन दरशन मैं गम्य करै, संसार अवस्था मैं विशेष कहे सब जानै। सामान्यमात्रमैं कोई बिरला पावै विशेषमैं बहु पावै। सो यह कथन संसार विविक्षा को है। दरशन की सिद्धि सामान्य जनायवे कौं कह्यौ है। जो कोई अपनें प्रभु समीप जाय है सो प्रथम देखै है तब सब क्रिया होय है। प्रभुकौं न देखै है तो कछु न होय तैसैं परमातम राजा के देखैं सब सिद्धि है। जैसें निरविकल्प रीति करि दरशन भेवै ताकौं निरविकल्प आनंदफल होय है।

आगै ज्ञानमंत्री परमातम राजा को कैसैं सेवै है

परमातम राजा कै जो विभव है ताकौं विशेष जामैं अनंतगुण की अनंतशक्ति अनंतपर्याय, एक २ गुण की परजायमैं अनंतनृत्य, नृत्यमैं अनंत थट, थटमैं अनंतकला, कलामैं अनंतरूप, रूपमैं अनंतरूप, रूपमैं अनंतसत्ता, सत्तामैं अनंतभाव, भावमैं अनंत-

रस, रसमैं अनंतप्रभाव, प्रभावमैं अनंत विभव, विभवमैं अनंतरिद्धि, रिद्धिमैं अनंत अतीन्द्रिय अनाकुल अनोपम अखंडित स्वाधीन अविनाशी आनंद ये सब भाव ज्ञान जानैं तब व्यक्त होय तब नांव पावे। ज्ञान न जानैं तब वेदवो न होय तब हूवा ही न हूवा। तातैं ज्ञान अनन्तगुणपर्याय की समुदाय कौ प्रगट करै है। तब परमातमा कौ पद प्रगट करै है। तब परमातमा कौ पद प्रगट होय है। ज्ञान जानै परमातमानैं तब सर्वस्व परमातमा कौ प्रगटै। ज्ञान त्रिकालवर्ती पदार्थ जानै या शक्ति ज्ञानमें है। स्वसंवेदन ज्ञान तातैं ज्ञान सकल विशेष भाव स्वपर का लखावावालौ छै सो ज्ञान सकल नै प्रगट करै। सो परमातम राजा कौ प्रभुत्व ज्ञान प्रगट करै छै। ज्ञान बिना परमातम राजा की विशेष विभूति कुन प्रगट करै, ज्ञान ही प्रगट करै। ज्ञान मंत्री (कौ) ज्ञायकतारूप जानि परमातम राजा (नै) सर्वमैं प्रधानता दई। राजा कौ राज ज्ञानकरि है। जैसें काहू के घर मैं निधान है, न जानै तौ वह निधान भयो ही न भयौ। तैसैं परमातम राजा कै अनन्त निधान ज्ञान न जानै तौ सब वृथा होय।

तातैं सब पद की सिद्धि ज्ञानमंत्री तैं है। सत्तामैं सासतालक्षण (नै) और गुणकौ सासता कीया। उत्पादव्यय कौं धरे द्रव्य गुण पर्याय का आधार सो ज्ञान नै जनाया। परमातम राजा कौं वीर्यमैं निहपन्न राखवे का भाव है, सबकौं निहपन्न राखै सो ज्ञान नै जनाया। गुणन का भाव पर्यायभाव ज्ञान नै जनाया। तातैं ज्ञानमंत्री सब का जनावनहार है। सबकौं ज्ञान करि परमातम राजा जानै है, तातैं यह जानै है मेरे ज्ञानमंत्री करि मैं सब जानौं हौं। यह ज्ञानमंत्री प्रधान सब परि प्रधान है। या ज्ञानमंत्री कौं अपना सर्वस्व सौंप्या है। अरु विशेष अतीन्द्रिय आनंद की सिद्धि ज्ञान पावै है। ज्ञानतैं इस परमातम राजा कै और बड़ा नाहीं। सर्वज्ञता याही कौं संभवै है।

आगैं चारित्रमंत्री कैसैं सेवै है सो कहिये है।

परमातम राजा कै जेता कछु राजारिद्धि का भाव है। तेता भावकौं चारित्र आचरै है थिरता राखै है। ज्ञान के जानपनै कौं आस्वादी होय थिरता राखै आचरै। ज्ञान

स्वसंवेदभाव धरैं परम आनन्द उपजावै है सो चारि दरशन में सर्व-दरशी शक्ति है। स्वरूपकौं देखै है परमातम राजा के देखवेतैं जो आनन्द पावै है—थिरताभाव पावै है सो चारित्रतैं। वीर्य निहपन्नता की थिरता पावै हैं सो चारित्रतैं, प्रमेय सत्ता आदि सब गुण थिरता पावै हैं सो चारित्रतैं। वेदकभाव सबका चारित्र करै है। चारित्र सब द्रव्य गुण पर्याय शक्ति लक्षण सरूप रूप सर्वस्व वेदै है थिरता राखै है। चारित्र मंत्रीतैं अपनें घर की रिद्धि का जो सुख है सो परमातम राजा विलसै है। जो चारित्र न होता तौ अपनी राजधानी का सुख आप परमातम राजा न विलसता। काहेतैं यह रसास्वाद करणें का अंग इस ही का है ओर मैं नाहीं। राजा का पद सफल अनंतसुखतै है सो सुख इसतै है। तातैं यह राजपद की सफलता का कारण है। अर्थक्रिया षट कारक यातैं है। उत्पाद व्यय ध्रुवतामैं स्वरूप लाभ स्वभाव प्रच्यवन अवस्थित भाव या करि सिद्ध है है। सब गुण की अनंत महिमा यानै सफल करी है। सबमैं प्रवेस करि वेदि विनके स्वरूप भाव की प्रगटता करि वरतैं हैं। तब परमातम

राजा जानैं। यातैं सबकी प्रगटता अरु रसास्वाद है। परमसुख याही करि भयो है। या बिना वेदकता नहीं। यह चारित्र मंत्री सब गुण कौं सफल करै है। याही करि मेरी गुण प्रजा का विलास है सो जान्या जाय है। और तौ जे लक्षण रीति धरे है सो तिन लक्षण कौं सफलता करि परमातम राजा की राजधानी राखै है। तातैं चारित्रमंत्री सब घर की निधि की सिद्धि करै है। बारैं ही बारैं सिद्धि न करै, विनके घर मैं प्रवेश करि विनकी निधि महिमा का विलास व्यक्त करै है ऐसा चारित्र प्रधान है। चारित्र काहू का आचरण न करै तौ सब गुण की भेंट परमातमराजा सौं भई ही न भई, तब निज प्रजा का अभाव भयें राजा किसका कहावै तातैं राजपद का राखणसील बड़ा मंत्री है।

आगैं सम्यक्त फौजदार का वर्णन करिये है।

सम्यक्त फौजदार; सब गुणप्रजा सब असंख्यदेसन की है तिस प्रजा कौ भलीभांति पालै है। तिस गुणप्रजा के प्रतिकूली है तिनका प्रवेश न होण दे है। काहू की जोरी

चोरी न चलै है । ज्ञान का प्रतिकूल अज्ञान ताकरि संसारी अंध भये डोले हैं निजतत्व कौं न जानै है । स्वरूप तैं भिन्न पर कौं हेय न जाने है । परकौं स्व मानि मानि मोह बैरी कौ प्रबल करि अपणी शक्ति मंदकरि चौरासी लाख जोनि–देशन मैं अनादि के हींडे है थिरता का लेमभी न पावै हं । ऐसी अज्ञान महिमा ताकौं यह सम्यक्त फौजदार अपनें देशन मैं प्रवेस अंसमात्र हू न करनैं दे है । अर दरसनावरणी स्वरूप का दरशन न होनै दे है विसतैं प्राणी परके देखवेमैं वर्तै है तहां आतम रति मानै है। अनादि आवरण ऐसा है। चक्षुद्वार परावलोकन होय है सो हू न होनै दे है । चक्षु दरशनावरणी ऐसा है । अचक्षुदरशनावरणी अचक्षुदरशन हू न होनै दे । अवधिदरशनावरणी अवधिदरशन न होनैं दे । केवलदरशनावरणी केवलदरशन न होनैं दे । निद्रा पांच, जागरत का आवरण करै है सो स्वरूप दरशन कहां तैं होनैं दे । तातैं दरशनावरणी स्वरूप दरशन का घातक है । ऐसे प्रतिकूलौं कौं सम्यक्त फौजदार प्रवेश न होनै दे । मोह, सम्यक्त का घातक अनंत सुख का घातक स्वरूपाचरण चारित्र का घातक । इस मोह

(नैं) जगत के जीव बहिरमुख करि राखे हैं, पर का फंद पारि व्याकुल करि अनातम अभ्यासतैं दुखी कीये हैं। साम्यभाव--अमृतरस न चाखनैं दे है। अतत्वमैं श्रद्धा रुचि प्रतीति करि मानी है पर पद का अभिमानी रागतैं उन्मत्त पैंड पैंड परि नया स्वच्छंद दसा धारि विषय कषायसौं व्यापव्यापकता परपरणति असुद्धता करि संसारवारा तिस मोहनैं कराया हैं इन संसारी जीवन कौं। मोह की महिमा शरीरादि अनित्य मानै, मोहतैं परम प्रेम करि सुख दुख मानै है। महामोह की कल्पना ऐसी है। अनंतज्ञान के धणी कौं भुलाय राख्या है। ऐसा प्रतिकूली बैरी कौं सम्यक्त फौजदार न आवैन दै। परमातम राजा की आण ऐसी मनावै है। वेदनीय कर्म करि संसारी साता असाता पावै है तहां सुख दुख वेदै हैं। हरष सोक मानि मानि महा परवसि भये स्वरूप अनुभव न करि सकै। परास्वादमैं रस मानैं है। ऐसे प्रतिकूली कौं न आवनैं दे है। नामकर्म की करी नाना विचित्रता है। कोई देवनाम नरनाम नारकनाभ तिरजंचनाम जात्यादिनाम सरीरादिनाम अनेक नाम हैं ते धरैं हैं। संसारी ते सूक्ष्मगुण कौं न पावै है। ऐसे प्रतिकूली का प्रवेश न होने दे है सम्यक्त

फौजदार। ऊंच नीच गोत्रकर्म के उदयतैं ऊंच नीच गोत्र संसारी धरै है। तातैं अगुरुलघु गुणकौं न पावै है। ऐसैं कर्म का प्रवेश न होनै दे है। आयुकर्म च्यारि प्रकार, अंतराय पांच प्रकार इनकौं न आवनै दे है सम्यक्त फौजदार। भावकर्म नोकर्म का प्रवेश न होय ऐसा तेज सम्यक्त का है। परमातमा राजा की राजधानी यथावत जैसी है तैसी राखै है। परमातमा राजा के जेते गुण हैं तेते सुद्ध या सम्यक्ततैं हैं तातैं याकौं ऐसा काम सौंप्या है।

आगैं परणाम कोटवाल का वर्णन कीजिये है।

परणाम कोटवाल, मिथ्यातपरणाम—परपरणाम चोर का प्रवेश न होने दे है। पर-परणाम चोर कैसै हैं सो कहिये है—

स्वरूप रूप परणाम के द्रोही हैं, पररूपकौं धुके है, परपद का निवास पाय आतम निधि चोरवे कौं प्रवीन हैं। रागादि रूप अवस्था नैं अनाकुल सुख का संबंध जिनकै

कबहू न भया है । परम्म के रसिया हैं । भववासी जीवकौं अतिविषम है ताऊ प्रिय लागै हैं । बंधन के करता हैं । पराधीन हैं । विनासीक हैं । अनादि सादि परणामीकता कौं लीये हैं । परंपरया अनादि है । ऐसे परपरणाम का प्रवेश परणाम कोटवाल न होने दे है । तिस परणाम कोटवाल नै परमातम राजा के देस की प्रजा की संभार समय समय करी है । तिस कै बडा जतन है । परमातम राजा नै एक स्वरूपरूप अनन्तगुणन की रखवाली का ओहदा सौंप्या है । हमारे देस की सब सुद्धता तातै है । तब ऐसा जानि गुणप्रजा की समय समय और राजा की समय समय संभार करै हैं । सब गुण के घर मैं प्रवेश करि तिनके निधान कौं सावूत करि प्रतक्ष तिनका प्रभाव प्रगट करै है । या कोटवाल मैं ऐसी शक्ति हैं जो नैंक वक्र होय तौ राजा का सब पद असुद्ध होय शक्ति मंद होय संसारी की नांई । तातैं परणाम कोटवाल सकल पद कौं सुद्ध राखै है । परणाम के आधीन राजपद है तातैं परमरक्षाकारी कोटवाल है । परणाम कोटवाल मैं ऐसी शक्ति हैं सो सब राज कौं, राजा की गुण प्रजा कौं, मंत्री कौं, फौजदार कौं अपनी शक्ति

मिलाय विद्यमान राखै है। सब अपणी महिमा कौं यातैं धरैं हैं। याकरि विनका सर्वस्व है ऐसा परणाम कोटवाल परमातम पद का कारण है तातैं यामैं अपार शक्ति है।

आगैं परमातम राजा का वर्णन कीजिये है।

परमातम राजा अपनी चिदपरणातितिया मौं रमै है। कैसी है चेतनापरणति महा अनन्त अनोपम अनाकुल अबाधित सुख कौ दे हैं। परमातम राजा सौं मिलि मिलि एक रस ह्वै है। परमातम राजा अपनां अंग सौं मिलाय एकरूप करै है।

कोई इहां प्रश्न करै—जो परणति समय समय ओर ओर होय है तातैं परमातम राजा कै अनन्त परणति भई तब अनन्तपरणतितिया कहौ।

ताकौ समाधान—परमातम राजा एक हैं, परणतिशक्ति भाविकाल में प्रगट ओर ओर होने की हैं परि वर्तमानकाल मैं व्यक्तरूप परणति एक है सोही विस राजा कौ रमावै है। जो परणति वर्तमान की कौं राजा भोगवै है सो परणति समयमात्र आतमीक

अनन्त सुख देकरि विलय जाय है। परमातम मैं लीन होय है। जैसै देव के देवांगना एक विलय होइ तब दूजी उपजै तासौं देव भोग करै। परि ए तौ विशेष, बाकी रहणि घणी, याकी एक समय मात्र। अरु वा विलय होइ और थानक उपजै, या परि तिस रूप ही मैं समावै है। वर्तमान अपेक्षा एक है अनन्त रस कौ करै है। सरूपकौं वेदि अंतर मैं मिलि स्वरूप निवास करि फेरि दूजै समय उपजै है।। स्वरूप के शरीर मैं प्रवेश करि सुख दे मिलि गई फेरि उपजि करि दूजै समय फेरि सुख दे है। उपजतां स्वरूप सुख लाभ दे व्यय करि स्वरूप मैं निवास करि ध्रुवताकौं पोषि आनंद पुंजकौं करि स्वरसकी प्रवृत्ति करणहारी कामिनी नवा स्वांग धरै है। परमातम राजा का अंग सकल पुष्ट करै है। ओर तिया बलकौं हरै है, या बल करै है। ओर कबहू कबहू रस भंग करै है, या सदा रसकौं करै है। या सदा आनंदकौं करै है। परमातम राजा कौं प्यारी सुख दैनी परम राणी अतीन्द्रिय विलास करणी अपनी जानि आप राजा हू यासौं दुराव न करै। अपनौं अंग दे समय समय मिलाय ले है अपने अंगमैं। राजा तौं वासौं मिलतां

वाके रंगि होय है । वा राजासौं मिलतां राजा के रंगि होय है । एक रस रूप अनूप भोग भोगवै है । परमातम राजा अरु परणति तिया का विलास सुख अपार, इनकी महिमा अपार है । यह परमातम राजा का राज सदा सास्वत अचल है । अनंत वर्णन कीयें हू पार न आवै । विस्तारमैं आजि थोडी बुद्धि तातैं न समझि परै । तातैं स्तोक कथन कीया है । जे गुणवान हैं ते या थोडे ही बहुत करि समझैंगे । इसहीमैं सारा आया है । समझिवार जानैंगे ।

सवैया ।

परम पुराण लखे पुरुष पुराण पावे सही ह्वै स्वज्ञान जाकी महिमा अपार है ।
ताकी कीयें धारण उघारणा स्वरूप का ह्वै ह्वै है निसतारणा सो लहैं भवपार है ॥
राजा परमातमा कौ करत बखाण महा दीपकौ सुजस बढै सदा अविकार है ।
अमल अनूप चिद्रूप चिदानंद भूप तुरत ही जानै करै अरथ विचार है ॥१॥

दोहा ।

परम पुरुष परमातमा, परम गुणनकौ थान ।
ताकी रुचि नित कीजिये, पावै पद भगवान ॥२॥

॥ इति परमात्मपुराण ग्रंथ सम्पूर्ण ॥

स्वर्गीय कविवर दीपचंदजी कृत

ज्ञानदर्पण

दोहा।

गुण अनंत ज्ञायक विमल, परमज्योति भगवान। परमपुरुष परमातमा, शोभित केवलज्ञान ॥१॥

सवैया इकतीसा (मनहर)

ज्ञानगुणमाहिं ज्ञेय भासना भई हैं जाकें, ताके शुद्ध आतमाको सहज लखाव है।
अगम अपार जाकी महिमा महत महा, अचल अखंड एकताको दरसाव है॥
दरसन ज्ञान सुख बीरज अनंत धारै, अविकारी देव चिदानंद ही को भाव है।

ऐसो परमातमा परमपदधारी जाकौं, दीप उर देखै लखि निहचै सुभाव है ॥२॥
देखैं ज्ञानदर्पणकौं मति परपण[१] होय, अर्पण सुभावकौ सरूपमें करतु हैं ।
उठत तरंग अंग आतमीक पाइयतु, अरथ विचार किए आप उधरतु हैं ॥
आतमकथन एक शिवहीकौ साधन है, अलख अराधनके भावकौं भरतु हैं ।
चिदानंदरायके लखायवेकौं है उपाय, याके सरधानी पद सासतौ वरतु हैं ॥३॥
परम पदारथकौं देखैं परमारथ है, स्वारथ सरूपकौ अनूप साधि लीजिए ॥
अविनासी एक सुखरासी सोहै घटहीमैं, ताकौ अनुभौ सुभाव सुधारस पीजिये ॥
देव भगवान ज्ञानकलाकौ निधान जाकौं, उरमैं अनाय[२] सदाकाल थिर कीजिए ॥
ज्ञानहीमैं गम्य जाकौ प्रभुत्व अनंत रूप, वेदि निज भावनामैं आनंद लहीजिए ॥४॥
दशा है हमारी एक चेतना विराजमान, आन परभावनसौं तिहूं काल न्यारी है ।
अपनौ सरूप शुद्ध अनुभवै आठौ जाम, आनँदकौ धाम गुणग्राम विसतारी है ॥

१ प्रपन्न २ लाकरके

परम प्रभाव परिपूरन अखंड ज्ञान, सुखकौ निधान लखि आन रीति डारी है ॥
ऐसी अवगाढ़ गाढ़ आई परतीति जाके, कहै दीपचंद ताकौं वंदना हमारी है ॥५॥
परम अखंड बृहमंड विधि लखै न्यारी, करम विहंड करै महा भवबाधिनी ।
अमल अरूपी अज चेतन चमतकार, समैसार साधै अति अलख अराधिनी ॥
गुणकौ निधान अमलान भगवान जाकौ, प्रतछ दिखावै जाकी महिमा अबाधिनी ।
एक चिदरूपकौ अरूप अनुसरै ऐसी, आतमीक रुचि है अनंतसुखसाधिनी ॥६॥
अचल अखंडपद रुचिकी धरैया भ्रम-भावकी हरैया एक ज्ञानगुनधारिनी ।
सकति अनंतकौ विचार करै बारबार, परम अनूप निज रूपकौ उधारिनी ॥
सुखकौ समुद्र चिदानंद देखै घटमाहि, मिटै भव बाधा मोख पंथ की बिहारिनी ॥
दीप जिनराजसौ सरूप अवलोके ऐसी, संतनकी मति महामोक्ष अनुसारिनी ॥७
चेतनसरूप जो अनूप है अनादिहीकौ, निहचै निहारि एकताहीकौं चहतु हैं ।
स्वपरविवेक कला पाई नित पावन है, आतमकि भवनमैं थिर ह्वै रहतु हैं ॥

अचल अखंड अविनासी सुखरासी महा, उपादेय जानि चिदानंदकौं गहतु हैं ।
कहै दीपचंद ते ही आनँद अपार लहि, भवसिंधुपार शिवद्वीपकौं लहतु हैं ॥८॥

चेतनको अंक एक सदा निकलंक महा, करम कलंक जामैं कोऊ नहीं पाइए ॥
निराकार रूप जो अनूप उपयोग जाके, ज्ञेय लखैं ज्ञेयाकार न्यारौ हू बताइये ॥
बीरज अनंत सदा सुखकौ समुद्र आप, परम अनंत तामैं और गुण गाइये ॥
ऐसो भगवान ज्ञानवान लखै घटही मैं, ऐसो भाव भाय दीप अमर कहाइये ॥९॥

व्यवहार नयके धरैया व्यवहार नय, प्रथम अवस्था जामैं करालंब कह्यो है ।
चिदानंद देखै व्यवहार झूठ भासतु है, आतमीक अनुभौ सुभाव जिहिं लह्यो है ॥
देव चिदरूपकी अनूप अवलोकनिमैं, कोऊ विकलप भाव भेद नहिं रह्यो है ॥
चेतन सुभाव सुधारस पान होय जहां, अजर अमरपद तहां लह लह्यो है ॥१०॥

ज्ञान उर होत ज्ञाता उपादेय आप मानै, जानै पर न्यारौ जाके कला है विवेककी ॥
करम कलंक पंक डंक नहीं लागै कोऊ, देव निकलंक रुचि भई निज एककी ॥

निरभै अखंडित आबधित सरूप पायौ, ताहीकरि मेटी भ्रमभावना अनेककी ॥
देव हियबचि बसै सासतौ निरंजन है, सो ही धनि दीप जाके रीति सुध टेककी ॥११॥
मेरो ज्ञानज्योतिकौ उद्योत मोहि भासतु है, तातैं परज्ञेयको सुभाव त्याग दीनौ है॥
एक निराकार निरलेप जो अखंडित है, ज्ञायक सुभाव ज्ञानमाहिं गहि लीनां है ॥
जाकी प्रभुतामैं उठि गए है विभाव भाव, आतम लखावहीतैं आप पद चीनौ है ॥
ऐसैं ज्ञानवानके प्रमान ज्ञान भाव आपौ, करनौ न रह्यौ कछु कारिज नवीनौ है ॥१२॥
मेरो है अनूप चिद्रूप रूप मोहिमाहिं, जाकै लखै मिटै चिर महा भवबाधना ॥
जाके दरसावमैं विभाव सो विलाय जाय, जाकी रुचि कीए सधै अलख अराधना ॥
जाकी परतीति रीति प्रीतिकरि पाई तातैं, त्यागी जगजाल जेती सकल उपाधना ॥
अगम अपार सुखदाई सब संतनकौं, ऐसी दीप साधै ज्ञानी सांची ज्ञानसाधना ॥१३॥
आप अवलोके विना कछु नाहीं सिद्धि होत, कोटिक कलेशनिकी करौ बहु करणी ।
क्रिया पर कीएं परभावनकी प्रापति है; मोक्षपंथ सधै नाहीं बंधहीकी धरणी ॥

ज्ञान उपयोगमै अखंड चिदानंद जाकी, सांची ज्ञान भावना है मोक्षअनुसरणी ॥
अगम अपार गुणधारीकौ सुभाव साधै, दीप संत जीबनकी दशा भवतरणी ॥१४॥
वेदत सरूप पद परम अनूप लहै, गहै चिदभाव महा आप निज थान है ॥
द्रव्यकौ प्रभाव अरु गुणकौ लखाव जामैं, परजायको उपावै ऐसो गुणवान है ॥
व्यय उतपाद ध्रुव सधै सब जाहीकरि, ताहितैं उदोत लक्ष्य लक्षनको ज्ञान है ।
महिमा महत जाकी कहांलौ कहत कवि, स्वसंवेदभावदीप सुखकौ निधान है ॥१५॥
चिदानंदराइ सुखसिंधु है अनादिहीकौ, निहचै निहारि ज्ञानदिष्टि धार लीजियै ।
नय विवहारहीतैं करम कलंक पंक, जाके लागि आए तौऊ सुद्धता गहीजिये ।
जैसी दिष्टि देखै सब ताकौ तैसौ फल होइ, सुध अवलोकै सुधउपयोगी हूजियै ।
दीप कहै देखियतु आतमसुभाव ऐसौ, सिद्धके समान ज्ञानभावना करीजियैं ॥१६॥
मेटत विरोध दोउ नयनको पछितात(!) महा निकलंक स्यातपद अंकधारणी ।
ऐसी निजवाणीके रमैया समैसार पावै, ज्ञानज्योति लखैं करैं करमनिवारणी ।

सिद्ध है अनादि यह काहूपै न जाइ खंड्यौ, अलख अखंडरीति जाकी सुखकारणी।
लहिकैं सुभाव जाकौं रहि हैं सुथिर जेही, तेही जीव दीप लहैं दशा भवतारणी ॥१७॥
मानि परपद आपौ भूले ए अनादिहीके, ऐसे जगवासी (निजरूप) न संभारै हैं।
घटहीमैं सासतो निरंजन जो देव बसै, ताकौं नहीं देखै तातैं हितकौं निवारै हैं।
जोति निजरूपकी न जागी कहुं हीये माहिं, यातैं सुखसागर सुभावकौं विसारै हैं।
देशना जिनेंद्र दीप पाय जब आपा लखै, होइ परमातमा अनंत सुख धारै हैं ॥१८॥
सहज आनंद पाइ रह्यो निजमैं लौ लाइ, दौरि २ ज्ञेयमैं धुकाइ क्यौं परतु है।
उपयोग चंचलके कीयेही असुद्धता है, चंचलता मेटैं चिदानंद उधरतु है
अलख अखंड जोति भगवान दीसतु है, नैयकतैं देखि ज्ञाननैन उघरतु हैं।
सिद्ध परमातमा सौं निजरूप आतमा है, आप अवलोकि दीप सुद्धता करतु हैं ॥१९॥
अचल अखंड ज्ञानजोति है सरूप जाकौ, चेतनानिधान जो अनंतगुणधारी है।
उपयोग आतमीक अतुल अबाधित है, देखिये अनादि सिद्ध निहचै निहारी है ॥

आनंदसाहित कृतकृत्यता उद्योत होइ, जाही समै ब्रह्मदिष्टि देत जो संहारी है।
महिमा अपार सुखसिंधु ऐसो घटही मैं, देव भगवान लखि दीप सुखकारी है ॥२०॥
परपरिणाम त्यागि तत्त्वकी संभार करै, हरै भ्रमभावज्ञान गुणके धरैया हैं।
लखै आपा आपमाहिं रागदोष भाव नाहिं, सुद्ध उपयोग एक भावके करैया हैं ॥
थिरतासुरूपहीकी स्वसंवेदभावनमैं, परम अतेंद्री सुख नीरके ढरैया हैं।
देव भगवान सौ सरूप लखै घटहीमैं, ऐसे ज्ञानवान भवसिंधुके तरैया हैं ॥२१॥
लोकालोक लखिकैं सरूपमैं सुथिर रहैं, विमल अखंड ज्ञानजोतिपरकासी हैं।
निराकार रूप सुद्धभावके धरैया महा, सिद्धभगवान एक सदा सुखरासी हैं।
ऐसौ निजरूप अवलोकत हैं निहचैमैं, आप परतीति पाय जगसौं उदासी हैं।
अनाकुल आतम अनूप रस वेदतु हैं, अनुभवी जीव आप सुख के विलासी हैं ॥२२॥
करम अनादि जोग जातैं निज जान्यो नाहिं, मानि परमाहिं आपौ भवमैं बहतु हैं।
गुरु उपदेश समै पाय जो लखावै जीव, आप पद जानैं भ्रमभावकौं दहतु हैं।

देवनको देव सो तो सेवत अनादि आयौ, निजदेव सेए बिनु शिव न लहतु है ।
आप पद पायवेकौं श्रुतसौं बखान्यौ जिन, तातैं आत्मीक ज्ञान सबमैं महतु है ॥२३॥
गगनकै बीचि जैसैं घनघटामाहिं रचि, आप छिप रह्यौ तोऊ तेज नहिं गयो है ।
करमसंजोग जेसैं आवर्यौ है उपयोग, गुपत सुभाव जाकौ सहज ही भयौ है ।
ज्ञेयकौ लखत ऐसो ज्ञानभाव यामैं कोऊ, परम प्रतीति धारि ज्ञानी लखि लयो है ।
उपयोगधारी जामैं उपयोग कीएं शिध्दि, और परकार नहीं जिनवैन चयो है ॥२४॥
महा दुखदानी भव थितिके निदानी जातैं, होय ज्ञान हानी ऐसैं भावक चमैया हैं ।
अति ही विकारी पापपुंज अधिकारी सदा, ऐसे राग दोष भाव तिनके दमैया हैं ।
दया दान पूजा सील संजमादि सुभभाव, ए हू पर जानैं नाहिं इनमैं उम्हैया हैं ।
सुभासुभ रीति त्यागि जागे हैं सरूपमाहिं, तेई ज्ञानवान चिदानंदके रमैया हैं ॥२५॥
देहपरिमाण गति गतिमाहिं भयौ जीव, गुपत ह्वै रह्यो तौऊ धारें गुणवृंद है ।
करम कलंक तोऊ जामैं न करम कोऊ, रागदोष धारे हू विसुद्ध निरफंद है ।

धारत सरीर तोउ आतमा अमूरतीक, सुध पक्ष गहे एक सदा सुखकंद है ।
निहचै विचार देख्यौ सिद्ध सो सरूप दीप, मेरे तौ अनादिकौ सरूप चिदानंद है ॥२६॥
व्यवहारपक्ष परजाय धरि आयौ तौउ, सुद्धनै विचारे निज परमै न फँसा है ।
ज्ञान उपयोग जाकी सकति मिटाई नाहिं, कहा भयौ जो तू भववासी होय वसा है ।
द्वैतकौ विचार कीएं भासत संयोग पर, देखै पद एक पर ओर नहिं धसा है ।
निहचै बिचारकैं सरूपमैं संभारि देखी, मेरी तौ अनादिहीकी चिदानंद दसा है ॥२७॥
ज्ञानकी सकति महा गुपति भई है तौऊ, ज्ञेयकी लखैया जाकी महिमा अपार है ।
प्रतच्छ प्रतीतिमैं परोक्ष कहो कैसैं होई, चिदानंद चेतनकौ चिह्न अविकार है ।
परम अखंड पद पूरन विराजमान, तिहुं लोकनाथ कीएं निहचै विचार है ।
अखैपद यौ ही एक सासतो निधान मेरैं, ज्ञान उपयोगमैं सरूपकी संभार है ॥२८॥
बहु विसतार कहु कहांलौं बखानियतु, यह भववास जहां भावकी असुद्धता ।
त्यागि गृहवास है उदास महाव्रत धारैं, यह विपरीति जिनलिंग माहिं सुद्धता ।

करमकी चेतनामैं शुभउयोग सधै, ताहीमैं ममत ताकै तातैं नाहीं सुद्धता ।
वीतराग देव जाकौ यौही उपदेश महा, यह मोखपद जहां भावकी विशुद्धता ॥२९॥
ज्ञान उपयोग जोग जाकौ न वियोग हूवो, निहचैं निहारैं एक तिहुंलोकभूप है ।
चेतन अनंत चिन्ह सासतौ विराजमान, गतिगति भम्यौ तौऊ अमल अनूप है ।
जैसैं मणिमाहिं कोऊ काचखंड मानै तोऊ, महिमा न जाय वामैं वाहीका सरूप है ।
ऐसे ही संभारिकै सरूपकौं विचार्यौ मैंने, अनादिकौ अखंड मेरौ चिदानंद रूप है ॥३०॥

दोहा ।

चिदानंद आनंदमय, सकति अनंत अपार । अपनौ पद ज्ञाता लखै, जामैं नहिं अवतार ॥३१॥

छप्पय ।

सहज परम घन धरन, हरन सब करन भरममल ।
अचल अमल पद रमन, वमन पर करि निज लहि थल ॥
अतुल अबाधित आप, एक अविनासी कहिए ।

परम महासुखासिंधु, जास गुण पार न लहिए ॥
जोती सरूप राजत विमल, देव निरंजन धरम धर ।
निहचै सरूप आतम लखै, सो शिवमाहिला होय वर ॥३२॥

अथ बहिरात्मा कथन

मुनिलिंग धरि महाव्रतकौं सधैया भयौ, आप बिनु पाए बहु कीनी सुभकरणी ।
यतिक्रिया साधिकै समाधिकौ न जानै भेद, मूढ़मति कहै मोक्षपदकी वितरणी ।
करमकी चेतनामैं सुभ उपयोग रीति, यह बिपरीति ताहि कहै भवतरणी ।
ऐसे तौ अनादिकी अनंत रीति गहि आयौ, क्रिया नहिं पाई ज्ञानभूमिअनुसरणी ॥३३॥
सुभउपयोगसेती जैसे पुण्यबंध होय, पात्तरकौं दान दीये भोगभूमि जाइये ।
सतसंगसेती जैसैं हितकौ सरूप सधै, थिरताके आएं जैसैं ज्ञानकौं बढाइये ।
गृहवासत्याग सो उदासभाव कीये होय, भेदज्ञान भावमैं प्रतीति आप भाइये ।
कारणतैं कारिजकी सिद्धि है अनादिहीकी, आतमीकज्ञानतैं अनंत सुख पाइये ॥३४॥

जामैं परवेदना उछेदना भई है महा, वेदै निज आतमपद परम प्रकासतौ ।
अनाकुल आत्मीक अतुल अतेंद्री सुख, अमल अनूप करै सुखकौ विलासतौ ।
महिमा अपार जाकी कहांलौं बखानै कोय, जाहीके प्रभाव देव चिदानंद भासतौ ।
निहचै निहारिकै सरूपमैं सँभारि देख्यौ, स्वसंवेदज्ञान है हमारौ रूप सासतौ ॥३५॥

परम अनंत गुण चेतनाकौ पुंज महा, वेदतु है जाके बल ऐसौ गुणवान है ।
सासतौ अखंड एकद्रव्य उपादान सो तौ, ताहीकरि सधै यामैं और न विनान है ।
जाहीके सुभावतैं अनंतसुख पाइयतु, जाहीकरि जान्यौ जाय देव भगवान है ।
महिमा अनंत जाकी ज्ञानहीमैं भासतु है, स्वसंवेदज्ञान सोही पदनिरवान है ॥३६॥

रागदोष मोहके विभाव धारि आयौ तौउ, निहचै निहारि नाहिं परपद गह्यो है ।
एक ज्ञानजोतिकौ उद्योत यौ अखंड लीयें, कहा भयौ जो तौ जगजालमाहिं बह्यौ है ।
महा अविकारी सुद्धपद याकौ ऐसौ जैसौ, जिनदेव निजज्ञानमाहिं लहलह्यो है ।
ज्ञायक प्रभामैं द्वैतभाव कोऊ भासै नाहिं, स्वसंवेदरूप यौं हमारो बनि रह्यो है ॥३७॥

ज्ञान उपयोग ज्ञेयमांहिं दे अनादिहीकों, करि अरुझार आप एक भूलि बह्यौ है ।
अमल प्रकाशवत मूरतिस्यौं बँधि रह्यौ, महा निरदोष तातैं परहीमैं फह्यौ है ।
ऐसे ह्वै रह्यौ है तौऊ अचल अखंडरूप, चिद्रूपपद मेरो देव जिन कह्यौ है ।
चेतना निधानमैं न आन परवेस कोऊ, स्वसंवेदरूप यौ हमारा बनि रह्यौ है ॥ ३८ ॥
जीव नटै नाट थाट गुण है अनंत भेष, पातरि सकति रसरीति विसताराकी ।
चेतना सरूप जाकौ दरसन देखतु है, सत्ता मिरदंग ताल परमेय प्याराकी ।
हाव भाव आदिक कटाक्षनकौ खयवौ जो, सुरकौ जमाव सब समकितधाराकी ।
आनंदकी रीति महा आप करै आपहीकौं, महिमा अखंड ऐसी आतम अपाराकी ॥३९॥
जैसैं नर कोऊ भेष पशुके अनेक धरै, पशु नहीं होइ रहै जथावत नर है ।
तैसैं जीव च्यारिगति स्वांग धरै चिरहीकौं, तजै नाहिं एक निज चेतनाकौ भर है ।
ऐसी परतीति कीये पाइये परमपद, होइ चिदानंद सिवरमणीकौ वर हैं ।
सासतौ सुथिर जहां सुखकौ विलास करै, जामैं प्रतिभासैं जेते भाव चराचर है ॥४०॥

दोहा।

निज महिमामैं रत भए, भेदज्ञान उर धारि। ते अनुभौ लहि आपकौ, करमकलंक निवारि ॥४१॥

मनहर ।

मूरति पदारथ जे भासत मयूर जामैं, विकारता उपल मयूर मकरंदकी ।
भावनकी ओर देखे भावना मयूर होइ, रहै जथावत दसा नहीं परफंदकी ।
तैसैं परफंदहीमैं परही सौ भासतु हैं, परही विकार रीति नही सुखकंदकी ।
एक अविकार शुद्ध चेतनकी वोर देखैं, भासत अनूप दुति देवचिदानंदकी ॥४२॥

मत्तगयन्द सवैया ।

मेरो सरूप अनूप विराजत, मोहिमैं और न भासत आना ।
ज्ञान कलानिधि चेतन मूरति, एक अखंड महासुखथाना ॥
पूरण आप प्रताप लिए, जहँ जोग नही परके सब नाना ।
आप लखै अनुभाव भयौ अति, देव निरंजनकौ उर ज्ञाना ॥४३॥

ज्ञान कला जागी जब पर बुद्धि त्यागी तब, आतमिक भावनमैं भयो अनुरागी है।
पर परपंचन मैं रंचहूं न रति मानै, जानै पर न्यारौ जाकै सांची मति जागी है।
महा भवभारके विकार ते उठाइ दीए, भेदज्ञान भावनसौं भयौ परत्यागी है।
उपादेय जानि रति मानी है सरूपमाहिं, चिदानंददेवमैं समाधि लय लागी है ॥४४॥
दरसन ज्ञान सुद्ध चारितकौ एक पद, मेरौ है सरूप चिन्ह चेतना अनंत है।
अचल अखंड ज्ञान जोति है उद्योत जामैं, परम विशुद्ध सब भावमैं महंत है।
आनंदकौ धाम अभिराम जाकौ आठौं जाम, अनुभयें मोक्ष कहै देव भगवंत है।
सिवपद पाइवेकौ और भांति सिद्धि नाहिं, यातैं अनुभयो निज मोक्षातियाकंत है ॥४५॥
अलख अरूपी अज आतम अमित तेज, एक अविकार सार पद त्रिभुवनमैं।
चिर ले सुभाव जाकौ समै हू समान्यौ नाहिं, परपद आपौ मानि भम्यौ भववनमैं।
करम कलोलनिमैं डोल्यौ है निशंक महा, पद पद प्रति रागी भयौ तन तनमैं।
ऐसी चिरकालकी हू विपति विलाय जाय, नैक हू निहारि देखौ आप निजधनमैं ॥४६॥

निहचै निहारत ही आतमा अनादिसिद्ध, आप निज भूलिहीतैं भयौ व्यवहारी है।
ज्ञायक सकति जथाविधि सो तौ गोप्य दई, प्रगट अज्ञानभाव दसा विसतारी है।
अपनौ न रूप जानै औरहीसौं और मानै, ठानै भवखेद निज रीति न सँभारी है।
ऐसैं तो अनादि कहौ कहा साध्य सिद्धि अब, नैक हूं निहारी निधि चेतना तुम्हारी है ॥४७॥
एक वनमाहिं जैसें रहतु पिशाची दोइ, एक नर ताकौं तहां अति दुख द्यावै है।
एक वृद्ध विकराल भाव धरि त्रास करै, एक महा सुंदर सुभावकौं लखावै है।
देखि किकराल ताकौं मनमाहिं भय मानै, सुंदरकौं देखि ताके पीछैं दौरि धावै है।
ऐसौ खेदखिन्न देखि काहू जन मंत्र दीयौ, ताकौं उर आनि वो निसंक सुख पावै है ॥ ४८ ॥
तैसैं याही भव जामैं संपति विपति दोऊ, महा सुखदुखरूप जनकौं करतु है।
गुरुदेव दीयौ ज्ञानमंत्र जब जब ध्यावै, तब न सतावै दोऊ दुखको हरतु है।
करिकै विचार उर आनिए अनूप भाव, चिदानंद दरसाव भावकौं धरतु है।
सुधा पान कीएं और स्वादको न चाखै कोऊ, कीएं सुध रीति सुधकारिज सरतु है ॥ ४९ ॥

देव जिनराजसे अनादिके बताय आए, तैसौ उपदेश हम कहांलौं बतावैंगे।
गहैं परस्वरूप ते सरूपकी चितौनी चुके, अनुभौमौं केतेई भवमैं भमावैंगे।
एतौ हू कथन कीएं लागे जो न उरमाहीं, तिनसे कठोर नर और न कहावैंगे।
कहैं दीपचंद पद आदि देकैं कोऊ सुनौ, तत्वके गहैया भव्य भवपार पावैंगे ॥५०॥
एक गुण सूच्छमकौ एतौ विसतार भयौ, सबै गुण सूच्छम सुभाव जिहि कीने हैं।
एक सत सूच्छमके भेद हैं अनंत जामैं, अगुरुलघुताहूकौं सूच्छमता दीने हैं।
अगुरुलघुताई सो सारे गुणमाहिं आई, अनंता अनंत भेद सूच्छम यौं लीने हैं।
सबै गुणमाहिं ऐसैं भेद सधि आवत हैं, तेही जन पावैं दीप चेतनता चीने हैं ॥५१॥
जगवासी अंध यो तौ बंध्यौ है करमसेती, फंद्यौ परभावमौं अनादिकौ कलंक है।
नर देव तिरजंच नारकी भयौ है जहां, अहंबुद्धिहीमैं डोल्यौ अति निसंक है।
करमकी रीति विपरीतिहीसौं प्रीति जातैं, रागदोष धारि धारि भयौ बहु बंक है।
करम इलाजमैं न काज कोऊ सिद्ध भयौ, अब तू पिछान जीव चेतनाकौ अंक है ॥५२॥

स्वपर विवेक धारि आतमस्वरूप पावै, चिदानंद मूरतिमैं जेई लीन भए हैं।
परसेती न्यारौ पद अचल अखंडरूप, परम अनूप आप गुण तेई लए हैं।
तिहुलोक सार एक सदा अविकार महा, ताकौ भयौ लाभ तातैं दोष दूरि गए हैं।
अतुल अबाधित अनंत गुणधाम ऐसौ, अभिराम अखैपद पाय थिर थए हैं ॥५३॥
राग दोष मोह जाकौ मूल है असुभ सुभ, ऐसे जोग भावमैं अनादि लगि रह्यौ है।
भेदज्ञान भावसेती जोगकौ निरोधि अति, आतम लखावहीमैं निज सुख लह्यौ है॥
परद्रव्य इच्छा परत्याग भयौ जाही समै, आप है अनंत गुणमई जाही गह्यौ है।
कारण सुकारिजकौ सिद्धि करि याही भांति, सासतौ सदैव रहै देव जिन कह्यौ है ॥५४॥
आपके लखैया परभावके नखैया रस, अनुभौ चखैया चिदानंदकौ चहत हैं।
परम अनूप चिदरूपकौ सरूप देखि, ऐसैं परमातमाकौ निजमैं महत हैं।
ज्ञान उर धारि मिथ्यामोहकौ निवारि सब, डारि दुख दोष भवपार जे लहत हैं।
लोकके सिखरि सुध सासतौ सुथान लहि, लोकलोक लखिकैं सरूपमैं रहतु हैं ॥५५॥

परपद त्यागि आप पदमाहि रति मानै, जगी ज्ञान जोति भाव स्वसंवेद वेदी है।
अनुभौ सरूप धरि परब्राहरूप जाके, चाश्वत अखंड रस भ्रमकौ उछेदी है॥
त्रिकालसंबंधि जब द्रव्य-गुण-परजाय, आप प्रतिभासै चिदानंदपद भेदी है॥
महिमा अनंत जाकी देव भगवंत कहैं, सदा रहै, काहूपै न जाय सो न ग्वेदी है॥५६॥
जगमैं अनादिहीकी गुपत भई है महा, लुपतसी दीसै तोऊ रहे अविनासी है।
ऐसी ज्ञानधारा जब आपहीकौं आप जाने, मिटै भ्रमभाव पद पावे सुग्वरासी है॥
अचल अनूप तिहुंलोकभूप दरसावै, महिमा अनंत भगवंत देव वासी है।
कहै दीपचंद सो ही जयवंत जगतमैं, गुणकौ निधान निज ज्योतिकौ प्रकासी है॥५७॥
मेरे निज स्वारथकौं मैं ही उर जानत हौं, कहिवेकौ नाहिं ज्ञानगम्य रस जाकौ है।
स्वसंवेद भावमैं लखाव है सरूपहीकौ, अनाकुल अतेंद्री अखंड सुख ताकौ है।
ताकी प्रभुतामैं प्रतिभासित अनंत तेज, अगम अपार समैसारपद वाकौ है।
सुद्धदिष्टि दीएं अवलोकन है आपहीकौ, अविनासी देव देखि देखै पद काकौ है॥५८॥

आतम दरब जाकौ कारण सदैव महा, ऐसौ निज चेतनमैं भाव अविकारी है।
ताहिकी धरणहारी जीवन सकति ऐसी, तासौं जीव जीवैं तिहुलोक गुणधारी है।
द्रव्य गुण परजाय एतौ जीवदसा सब, इनहीमैं वस्तु जीव जीवनता सारी है।
सबकौ अधार सार महिमा अपार जाकौ, जीवन सकति दीप जीव सुखकारी है ॥५९॥
दरसन-गुण जामैं दरसि सकति महा, ज्ञायक सकति ज्ञानमाहीं सुखदानी है।
अतुल प्रताप लीएँ प्रभुत्व सकति सोहै, सकति अमूरति सो अरूपी बखानि है।
इत्यादि सकति जे हैं जीवकी अनंत रूप, तिन्हैं दिढ़ राखिवेकौ अति अधिकानी है।
बीरज सकति दीप भाएं निज भावनमैं, पावन परम जातैं होई सिवथानी है ॥६०॥
तिहुंकाल विमल अमूरति अखंडित है, आकरती जाकी परजाय कही व्यंजनी।
अचल अबाधित अनूप सदा सासती है, परदेस असंख्यात धरै है अभंजनी।
विकलप भावकौ लखाव कोउ दीसै नाहिं, जाकी भवि जीवनकै रुचि भव-भंजनी।
महा निरलेप निराकार है सरूप जाकौ, दरसि सकति ऐसी परम निरंजनी ॥६१॥

सकति अनंत जामें चेतना प्रधानरूप, ताहूमें प्रधान महा ज्ञायक सकति है ।
परम अखंड ब्रह्मंडकी लखैया सो है, सूक्षम सुभाव यों सहजहीकी गति है ।
सुपर प्रकासनी सुभासनी सरूपकी है, सुखकी विलासनी अपाररूप अति है ।
उपयोग साकार बन्यौ है सरूप जाकौ, ज्ञानकी सकति दीप जानैं सांची मति है ॥६२॥
सुसंवेद भावके लखाव करि लखी जाहै, सबहीका पाहै कहांलौ कहीजिये ।
अचल अनूप माया सास्वती अबाधित है, अतिंद्री अनाकुलमें सुरस लहीजिये ।
अविनास--रूप है सरूप जाकौ सदाकाल, आनंद अखंड महा सुधापान कीजिये ।
ऐसा सुख सकति अनंत भगवंत कही, ताहीमें सुभाव लखि दीप चिर जीजिये ॥६३॥
सत्ताके अधार ए विराजत हैं सबै गुण, सत्तामाहिं चेतना है चेतनामें सत्ता है ।
दरसन ज्ञान दोउ एऊ भेद चेतनाके, चेतना सरूपमें अरूप गुण पत्ता है ।
चेतना अनंत गुण रूपतैं अनंतधा है, द्रव्य परजाय सोऊ चेतनका नत्ता है ।
जडके अभावमैं सुभाव सुध चेतनाकौ, यातें चिद सकतिमैं ज्ञानवान रत्ता है ॥६४॥

सूच्छम सुभावकौ प्रभाव सदा ऐसौ जिहिं, सबै गुण सूच्छम सुभाव करि लीने हैं।
बीरज सुभावको प्रभाव भयौ ऐसौ तिहि, अपने अनंत बल सबहीकौ दीने हैं।
परम प्रताप सब गुणमैं अनंत ऐसैं, जानैं अनुभवी जे अखंड रस भीने हैं।
अचल अनूप दीप सकति प्रभुत्व ऐसी, उरमैं लखावै ते सुभाव सुध कीने हैं ॥६५॥
अगुरुलघुत्वको बिभूति है महत महा, सब गुण व्यापिकै सुभाव एक रूप है।
ऐसे गुण गुणनिमैं बिभूति बखानियतु, जानियतु एक रूप अचल अनूप है।
निज निज लक्षणकी सकति है न्यारी न्यारी, जिहीं बिसतारी जामैं भाव चिदरूप है।
कहै दीपचंद सुख वहूं मैं सकति ऐसी, बिभूति लखैतैं जीव जगतको भूप है ॥६६॥
सकल पदारथकी अवलोकनि सामान्य, करै है सहज सुधाधारकी वरसनी।
जामैं भेद भावको लखाव कोउ दीसै नाहिं, देखै चिदजोति शिवपदकी परसनी।
सकति अनंती जेती जाहीमैं दिखाई देत, महिमा अनंत महा भासत सुरसनी।
कहै दीपचंद सुख कंदमैं प्रधान-रूप, सकति बनी है ऐसी सरव दरसनी ॥६७॥

सकल पदारथकौ सकल विशेष भाव, तिनकौ लखाव करि ज्ञान जोति जगी है।
आतमीक लच्छनकी सकति अनंत जेती, जुगपद जानिवेकौं महा अति वगी है।
सहज सुरस सुसंवेदहीमैं आनँदकी, सुधाधार होइ सही जाकै फरस (?) पगी है।
परम प्रमाण जाकौ केवल अखंड ज्ञान, महिमा अनंत दीप सकति सरबगी है ॥६८॥
आतम अरूपी परदेसकौ प्रकास धरै, भयौ ज्ञेयाकार उपयोग समलीन है।
लक्षण है जाको ऐसो विमल सुभाव ताकौ, वस्तु सुद्धताई सब वाहीकै अधीन है।
जथारथ भावकौ लखाव लिए सदाकाल, द्रव्य गुण परजाय यह भेद तीन है।
कहै दीपचंद ऐसी स्वच्छ है सकति महा, सो ही जिय जानै जाकै सुखकी कमी न है ॥६९॥
अनंत असंख्य संख्य भाग वृद्धि होय जहां, संख्य सु असंख्य सु अनंतगुणी वृद्धि है।
एऊ षट भेद वृद्धि निज परिणाम करै, लीन होइ हानि सो ही करै व्यक्त सिद्धि है।
परणति आपकी सरूपसौं न जाय कहूं, चिदानंद देव जाकै यहै महा ऋद्धि है।
सकति अगुरुलघु महिमा अपार जाकी, कहै दीपचंद लखै सब ही समृद्धि है ॥७०॥

दरब सुभावकरि ध्रौव्य रहै सदाकाल, व्यय उतपाद सो ही समै २ करै है।
सासतौ खिणक उपादान जानै पाईयतु, सोही वस्तु मूल वस्तु आपहीमैं धरै है।
द्रव्य गुण परजैकी जीवनी है याही यातैं, चेतना सुरसकौ सुभाव रस भरै है।
कहै दीपचंद यौं जिनंदकौ बखान्यौ बैन, परिणाम सकतिकौ भव्य अनुसरै है ॥७१॥
काहू परकार काहू काल काहू खेतरमैं, ह्वै है न विनाश अविनासी ही रहतु है।
परम प्रभाव जाकौ काहूंपै न मेट्यौ जाय, चेतना विलासके प्रकासकौ गहतु है।
आन अवभाव जामैं आवत न कोउ जहां, अतुल अखंड एक सुरस महतु है।
असंकुचित विकास सकति बनी है ऐसी, कहै दीप ज्ञाता लखि सुखकौं लहतु है ॥७२॥
गुण परजाय गहि बण्यौ है सरूप जाकौ, गुण परजाय विनु द्रव्य नाहिं पाईये।
द्रव्यकौ सरूप गहि गुण परजाय भये, द्रव्यहीमैं गुण परजाय ये बताईये।
सहज सुभाव जातैं भिन्न न बतायौ द्रव्य, तिन ही वस्तु कैसे ठहराईये।
तातैं स्यादवाद विधि जगमैं अनादिसिद्ध, बचनके द्वारि कहां कहां लगि पाईये ॥७३॥

गुणके सरूपहीतैं द्रव्य परजाय है है, केवलीउकति धुनि ऐसैं करि गावै है।
द्रव्य गुण दोऊ परजायहीमैं पाईयतु, द्रव्यहीमैं गुण परजाय ये कहावै है।
यातैं एक २ मैं अनेक सिद्धि होत महा, स्यादवादद्वारि गुरुदेव यौ बतावैं है।
कहै दीपचंद पद आदि देके कोऊ सुनो, आप पद लखें भवि भवपार पावै है ॥७४॥
एक गुणसेती दूजे गणसौं लगाय भेद, सधत अनंतवार सात भंग नीके हैं।
एक २ गुणसेती अनंता अनंतवार, साधत अनंत लगि लगै नाहिं फीके हैं।
अनंता अनंतवार एक २ गुणसेती, साधिए सपतभंग भेदिये सुहीके है।
यातैं चिदानंदमैं अनादिसिद्ध सुद्धि महा, पूरण अनंत गुण दीप लखे जीके हैं ॥७५॥
गुण एक २ जाके परजै अनंत कहे, प्रजैमै अनंतानंत नाना विसतर्‌यौ है।
नानामैं अनंत थट थटमैं अनंत कला, कलाजि अखंडित अनंतरूप धर्‌यो है।
रूपमैं अनंत सत्ता सत्तामै अनंत भाव, भावकौ लखाव हू अनंत रस भर्‌यो है।
रसके सुभावमैं प्रभाव है अनंत दीप, सहज अनंत यौ अनंत लगि कर्‌यौ है ॥७६॥

दरवस्वरूप सो तो द्रव्यमाहिं रहै सदा, औरकौं न गहै रहै जथारथताई है।
गुणकौं स्वरूप गुणमाहिं सो विराज रहै, परजाय दसा वाकी वाहीमाहिं गाई है।
जैसौ गुण जाकौ जाकौं जाही भांति करै और, विमलता हरै वामैं ऐसी प्रभुताई है।
तत्त्व है सकति जामैं विभुत्व अखंड तामैं, कहै दीप ऐसैं जिनवाणीमैं दिखाई है ॥७७॥
जाके देस देसमैं विराजित अनन्त गुण, गुणमाहिं देस असंख्यात गुण पाइए।
एक एक गुणनिमैं लक्षण है न्यारो न्यारो, सबनकी सत्ता एक भिन्नता न गाइए।
परजाय सत्तामाहिं व्यय उतपाद ध्रुव, षटगुणी हानि वृद्धि ताहीमैं बताइए।
निहचै स्वरूप स्वके द्रव्य गुण परजाय, ध्यावौ सदा तातैं जीव अमर कहाइए ॥७८॥
गुण एक एकमैं अनेक भेद न्यायकरि, द्रव्य गुण परजाय तीनौं साधि लीजिए।
नय उपचार और नयकी विविक्षा साधि, ताही भांति द्रव्यमाहिं तीनों भेद कीजिए।
परजाय परजायमाहिं मुख्य द्रव्य सो है, याही रूप गुण तीनौं यामै साधि दीजिए।
याही भांति एककर अनेक भेद सबै साधि, देखि चिदानंद दीप सदा चिर जीजिए ॥७९॥

आप सुद्ध सत्ताकी अवस्था जो स्वरूप करै, सो ही करतार देव कहै भगवान है।
परिणाम जीवहीको करम करावै यातैं, परणति क्रिया जाकौं जानैं सो ही जान है।
करता करम क्रिया निहचै विचार देखै, वस्तुमैं न भिन्न होइ यहै परमान है।
कहै दीपचन्द ज्ञाता ज्ञानमैं विचारै सो ही, अनुभौ अखंड लहि पावै सुखथान है॥८०॥
गुणकौ निधान अमलान है अखंडरूप, तिहूँलोकभूप चिदानन्द सो दरसि है।
जामैं एक सत्तारूप भेद त्रिधा फैलि रह्यौ, जाके अवलोके निज आनन्द वरसि है।
द्रव्यहीतैं नित्य परजायतैं अनित्य सदा, ऐसैं भेद धरिकैं अभेदता परसि है।
कहिए कहांलौं जाकी महिमा अपार दीप, देव चिदरूपकी सुभावता सरसि है॥८१॥
सहज आनन्दकन्द देव चिदानन्द जाकौं, देखि उरमाहिं गुणधारी जो अनन्त है।
जाके अवलोकैं यौ अनादिकौं विभाव मिटै, होय परमातमा जो देव भगवन्त है।
सिवगामी जन जाकौं तिहूंकाल साधि साधि, वाहीकौ स्वरूप चाहै जेते जगि सन्त हैं।
कहै दीप देखि जो अखंड पद प्रभुकौ सौ, जातैं जगमाहिं होय परम महन्त है॥७२॥

आतम करम दोऊ मिले है अनादिहीके, याहींतैं अज्ञानी ह्वैकै महा दुख पायौ है।
करिकै विचार जब स्वपर विवेक ठान्यौ, सबै पर भिन्न मान्यौ नाहिं अपनायौ है।
तिहूंकाल शुद्धज्ञान-ज्योतिकी झलक लीए, सासतौ स्वरूप आपपद उर भायौ है।
चेतना निधानमैं न आन कहूं आवन दे, कहै दीपचंद संतवंदित कहायौ है ॥८३॥
आगम अनादिकौ अनादि यौं बतावत है, तिहुंकाल तेरो पद तोहि उपादेय है।
याहीतैं अखंड ब्रह्ममंडकौ लखैया लखि, चिदानंद धारि गुणवृंद सोही धेय है।
तू तौ सुखसिंधु गुणधाम अभिराम महा, तेरो पद ज्ञान और जानि सब ज्ञेय है।
एक अविकार सार सबमैं महंत सुद्ध, ताहि अवलोकि त्यागि सदा पर हेय है ॥८४॥
याही जगमाहिं ज्ञेय भावकौ लखैया ज्ञान, ताको धरि ध्यान आन काहे पर हेरै है।
परके संयोगतैं अनादि दुख पाए अब, देखि तू सँभारि जो अखंड निधि तेरै है।
वाणी भगवानकीकौ सकल निचोर यहै, समैसार आप पुन्य पाप नहिं नेरै है।
यातैं यह ग्रंथ सिव-पंथको सधैया महा, अरथ विचारि गुरुदेव यौं परे रहैं ॥८५॥

व्रत तप सील संजमादि उपवास क्रिया, द्रव्य भावरूप दोउ बंधकौं करतु हैं।
करम जनित तातैं करमकौ हेतु महा, बंधहीकौ करैं मोक्षपंथकौं हरतु हैं।
आप जैसो होइ ताकौं आपके समान करै, बंधहीकौ मूल यातैं बंधकौं भरतु हैं।
याकौं परंपरा अति मानि करतूति करै, तेई महा मूढ भव-सिंधुमैं परतु हैं ॥८६॥
कारण समान काज सब ही बखानतु है, यातैं परक्रियामाहिं परकी धरणि है।
याहीतैं अनादि द्रव्य क्रिया तौ अनेक करी, कछु नाहिं सिद्धि भई ज्ञानकी परणि है।
करमकौ वंस जामैं ज्ञानकौ न अंश कोउ, बढै भववास मोक्ष-पंथकी हरणि है।
यातैं परक्रिया उपादेय तौ न कही जाय, तातैं सदा काल एक बंधकी ढरणि है ॥८७॥
पराधीन बाधायुत बंधकी करैया महा, सदा विनासीक जाकौ ऐसो ही सुभाव है।
बंध उदै रस फल जीमैं च्यार्यौ एक रूप, सुभ वा असुभ क्रिया एक ही लखाव है।
करमकी चेतनामैं कैसैं मोक्षपंथ सधै, मानैं तेई मूढ हीए जिनकै विभाव है।
जैसो बीज होय ताकौ तैसो फल लागै जहां, यह जग माहिं जिन-आगम कहाव है ॥८८॥

क्रिया सुभ कीजै पै न ममता धरीजै कहूं, हूजै न विवादी याभैं पूज्य भावना ही है।
कीजै पुन्यकाज सो समाज मारो परहीको, चेतनाकी चाहि नाहिं सधै याकै याही है।
याकौं हेय जानि उपादेयमैं मगन हूजै, मिटै है विरोध बाद रहै न कहां ही है।
आठोंजाम आतमकी रुचिमैं अनंत सुख, कहै दीपचंद ज्ञान भावहू तहां ही है ॥८९॥

इति बहिरात्मकथन

अथ पंचपरमेष्ठी कथन

दोहा।

सकल एक परमातमा, गुण ज्ञानादिक सार। सुध परणति परजाय है, श्रीजिनवर अविकार ॥९०॥

छियालीस गुण कथन

सवैया।

विमल सरीर जाकौ रुधिर बरण खीर, खेद तन नाहिं आदिसंस्थानधारी है।

संहनन आदि अति सुन्दर सरूप लीएँ, परम सुगंध देह महा सुखकारी है।
धरैं सुभ लक्षणकौं हित मित बैन जाके, बल है अनंत प्रभु दोषदुखहारी हैं।
अतिसै सहज दस जनमतैं होइ ऐसे, तिहुंलोकनाथ भवि जीव निसतारी हैं ॥९१॥
गगन गमन जाकैं दोयशत जोजनमैं, सुरभिक्ष च्यारों दिसि छाया नाहिं पाइए।
नयन पलक नाहिं लगैं न आहार ताकैं, सकल परम विद्या प्रभुकैं बताइए।
प्राणीकौं न बध उपसर्ग नहिं पाईयतु, फटिक समान तन महा सुद्ध गाईए।
केस नख बढ़ैं नाहिं घातिया करम गएं, अतिसै जिनेंदजीके मनमें अनाइए ॥९२॥
सकल अरथ लीएँ मागधीय भाषा जाके, तहां सब जीवनके मित्रता ही जानिए।
दरपण सम भूमि गंधोदकवृष्टि होय, परम आनंद सब जीवकौं बखानिए।
सब रितु के फल फूल है बनासपति, यौं न देव भूमिमैं जे उजूल (?)यौं मानिए।
चरणकमल तलि रचहिं कमल सु०, मंगल दरब वसु हीयेमैं प्रमानिए ॥९३॥
विमल गगन दिसि बाजत सुगंध वायु, धान्यको समूह फलै महा सुखदानी है।

चतुरनिकाय देव करत हंकार (?) जहां, धर्मचक्र देखि सुख पावै भवि प्रानी है ॥
देवनके कीए यह अतिसै चतुरदस, महिमा सुपुण्यकेरी जगमैं बखानी है।
कहै दीपचंद जाकौं इंदहूमे आय नमैं, ऐसौ जिनराज प्रभु केवल सुज्ञानी है ॥९४॥
करत हरण शोक ऐसौ है अशोक-तरु, देवनकी करी फूलवृष्टि सुखदाई है।
दिव्यध्वनिकरि महा श्रवणकौं सुख होत, सिंहासन सोहै सुर चमर ढराई है।
भामंडल सोहै सुखदानी सब जीवनकौं, दुंदुभि सुबाजैं जहां अति अधिकाई है।
त्रिभुवनपति प्रभु यातैं हैं छतर तीन, महिमा अपार ग्रंथ ग्रंथनमैं गाई है ॥९५॥
परम अखंड ज्ञानमांहिं ज्ञेय भासत है, ज्ञेयाकार रूप विवहारनै बतायौ है।
निहचै निरालो ज्ञान ज्ञेयसौं बखान्यौ जिन, दरसन निराकार ग्रंथनिमैं गायौ है।
बीरज अनंत सुख सासतौ सरूप लीएँ, चतुष्ट अनंत वीतराग देव पायौ है।
जिनकौं बखानत ही ऐसे गुण प्रापति है, यातै जिनराजदेव दीप उर भायौ है ॥९६॥

दोहा

सकल करमसौं रहित जो, गुण अनंत परधान । किंच ऊन परजाय है, वहै सिद्ध भगवान ॥९७॥
गुण छतीस भंडार जे, गुण छतीस हैं जास ॥ निज शरीर परजाय हैं, आचारज परकास ॥९८॥
पूरबांग ज्ञाता महा, अँगपूरब गुण जानि ॥ जिह सरीर परजाय है, उपाध्याय सो मानि ॥९९॥
आठबीस गुणकौं धरै, आठबीस गुणलीन ॥ निज सरीर परजाय है, महासाधु परवीन ॥१००॥

सवैया इकतीसा

गुणपरजायजुत द्रव्य जीव जाके गुण, है अनंत परजाय परपरणति है ।
परमाणू द्रव्यरूप सपरस रस गंध, गुण परजाय षट्वृद्धिहानिवति है ।
गति थितिहेतु द्रव्य गतिथिति गुण पर-जाय वृद्धि हानि धर्म अधर्म सुगति (?) है ॥
अवगाह बरतना हेतु दोउ दरबमैं, येही गुण परजाय वृध्दि हानि गति है ॥१०१॥
संज्वल कषाय थूल उदै मोह सूक्षमके, थूल मोह क्षय तथा उपसम कह्यो है ।
याही करि कारणतैं संजमको भाव होय, छट्टा गुणथानमाहिं महा लहि लह्यौ है ।

ताकौं मिथ्यामती केउ मूढ़ जन मानतु है, नयकी विविक्षा भेद कछु नाहिं गह्यौ है।
सहज प्रतच्छ शिव-पंथमैं निषेध कीने, यहां न विरोध कोउ रचंहू न रह्यो है ॥१०२॥

अथ छट्ठो भेद सामायिक कथन

सुभ वा असुभ नाम जागैं समभाव करै, भली बुरी थापनामैं समता करीजिएँ।
चेतन अचेतन वा भलो बुरो द्रव्य देखि, धारिकैं विवेक तहां समता धरीजिएँ।
शोभन अशोभन जो ग्राम वनमाहिं सम, भले बुरे समै हूं मैं समभाव कीजिएँ।
भले बुरे भावनिमैं कीजे समभाव जहां, सामायिक भेद षट यह लखि लीजिएँ ॥१०३॥

करम कलंक लगि आयौ है अनादिहीको, यातैं नहिं पाई ज्ञानदृष्टि परकाशनी।
गति गति माहिं परजायहीकौं आपौ मान्यौ, जानी न सरूपकी है महिमा सुभासनी।
रंजक सुभावसेती नाना बंध करै जहां, परि परफंद थिति कीनी भववासनी।
भेदज्ञान भयमैं सरूपमैं संभारि देखी, मेरी निधि महा चिदानंदकी विलासनी ॥१०४॥

महा रमणीक ऐसो ज्ञान जोति मेरो रूप, सुद्ध निज रूपकी अवस्था जो धरतु है।
कहा भयौ चिरसौं मलीन ह्वैकै आयौ तौउ, निहचै निहारे परभावन करतु है।
मेघ घटा नभ माहिं नाना भांति दीसतु है, घटामैं न होय नभशद्धता बरतु है।
कहै दीपचंद तिहुँलोक प्रभुताई लीए, मेरे पद देखें मेरौ पद सुधरतु है ॥१०५॥
काहे पर भावनमैं दौरि २ लागतु है, दसा पर भावनकी दुखदाई कही है।
जनमाहिं दुख परसंगतै अनेक सहे, तातैं परसंग तोकौं त्याग जोगि सही है।
पानी के विलोएँ कहु पाईये घिरत नाहिं, काच न रतन होय ढूंढौ सब मही है।
यातैं अवलोकि देखि तेरे ही सरूपकी सु, महिमा अनंतरूप महा बनि रही है ॥१०६॥
भेदज्ञानधारा करि जीव पुदगल दोउ, न्यारा न्यारा लखि करि करम विहंडनी।
चिदानंद भावकौ लखाव दरसाव कीयो, जामैं प्रति भासै थिति सारी ब्रहमंडनी।
करम कलंक पंक परिहरि पाई महा, सुद्धज्ञानभूमि सदा काल है अखंडनी।
तेई समकिती हैं सरूपके गवेषी जीव, सिवपदरूपी कीनी दसा सुखपिंडनी ॥१०७॥

आप अवलोकनिमैं अगम अपार महा, चिदानंद सुख--सुधाधारकी बरसनी ।
अचल अखंड निज आनंद अबाधित है, जाकी ज्ञान दशा शिवपदकी परसनी ।
सकति अनंतकौ सुभाव दरसावै जहां, अनुभौकी रीति एक सहज सुरसनी ।
धनि ज्ञानवान तेई परम सकति ऐसी, देखी हैं अनंत लोकालोक की दरसनी ॥१०८॥
तत्त्व सरधानकरि भेदज्ञान भासतु है, जातै परंपरा मोक्ष महा पाइयतु है ।
तत्त्व की तरंग अभिराम आठौं जाम उठै, उपादेयमाहिं मन सदा लाइयतु है ।
चिंतन सरूपको अनूप करै रुचिसेती, ग्रंथनमैं परतीति जाकी गाइयतु हैं ।
परमारथ पंथ वा सम्यक व्योहार नाम, जाकौं उर जानि जानि जानि भाईयतु हैं ॥१०९॥
आगम अनेक भेद अवगाहि रुचिसेती, लखिकै रहसि जामैं महा मन दीजिये ।
अरथ विचारि एक उपादेय आप जानै, पर भिन्न मानि मानि मानिकैं तजीजिए ।
जामैं जैसौ तत्त्व होय जथावत जानै जाहि, लखि परमारथकौं ज्ञान--रस पीजिए,
गुनि परमारथ यों भेदभाव भाइयतु, चिदानन्द देवकौ सरूप लखि लीजिए ॥११०॥

सुद्ध उपयोगी देखि गुणमैं मगन होय, जाकौ नाम सुनि हीए हरख धरीजिए।
मेरौ पद मोहिमैं लखायो जिहि संगसेती, मोही जाकी उरि भाय भावना करीजिए।
साधरमी जन जामैं प्रापति सरूपकी ह्वै, ताकौ संग कीजै और परिहरि दीजिए।
यतिजनसेवा वह जान्यौ भेद सम्यककौ, कहै दीप याकौं लखि सदा सुख कीजिए ॥१११॥
मिथ्यामती मूढ़ जे सरूपकौ न भेद जानैं, परहीकौं मानै जाकी मानि नहीं कीजिए।
महा सिवमारगकौ भेद कहुं पावै नाहिं, मिथ्यामग लागे ताकौं कैसैं करि धीजिए।
अनुभौ सरूप लहि आपमैं मगन ह्वै है, तिनहीके संग ज्ञान-सुधारस पीजिए।
मिथ्यामग त्यागि एक लागिए सरूपहीमैं, आप पद जानि आप पदकौं लखीजिए ॥११२॥
जाकौ चिदलच्छन पिछानि परतीति करै, ज्ञानमई आप लखि भयौ है हितारथी।
राग दोष मोह मेटि भेटयौ है अखंड पद, अनुभौ अनूप लहि भयौ निज स्वारथी।
तिहुँलोकनाथ यौ विख्यात गायौ वेदनिमैं, तामैं थिति कीनी कीनौं समकित सारथी।
सरूपके स्वादी अहलादी चिदानंदहीके, तेई सिवसाधक पुनीत परमारथी ॥११३॥

सवैया तेईसा

पैड़ी चढ़ै मुध चाल चलैं, मुकताफल अर्थ की ओर ढरै ।
कंटकलीन कमल लखैं, तिहि दोष विचारिकै त्यागि धरैं ।
उज्जल वाणि नहीं गुणहानि, सुहावनि रीतिकौं ना विसरैं ।
अक्षर मानसरोवरमाहिं, किलेक विहंग किलोल करैं ॥११४॥

कवित्त ।

करतार करता है करता अकरता है, करता अकरताकी रीतिमौं रहतु है ।
मूरतीक मूरतिकी उपेक्षा अमूरती है, सदा चिनमूरतिके भाव सौं सहतु है ।
एकमै अनेक एक है अनेकमाहिं एक, एकमैं अनेक है अनेकता गहतु है ।
लच्छिनकी लच्छि लीएं परतच्छ छिपाइयतु, कहूं न छिपाइयतु जगमैं महतु है ॥११५॥
है नाहीं है नाहिं वैनगोचर हू नाहीं यह, है नाहीं है नाहींमाहिं तिहुं भेद कीजियें ।
स्वपरचतुष्कभेदसेती जहां साधियतु, सोही नयभंगी जिनवाणीमैं कहीजिए ।

स्यातपदसेती सात भंगकौ सरूप साधै, परमाण भंगीसौं अभंग साधि लीजिये ।
दोउसौं रहत सौ तौ दुरनय भंगी कही, यहै तीनभेद सातभंगीके लखीजिये ।।११६।।
स्वसंवेद ज्ञान अमलान परिणाम आप, आपनकौं दए आप आपहीसों लए हैं ।
आपही स्वरूप लाभ लह्यौ परिणामनिमैं, आपहीमैं आपरूप ह्वैकैं थिर थए हैं ।
सासतो खिणक आप उपादान आप करै, करता करम क्रिया आप परणए हैं ।
महिमा अनंत महा आप धरै आपहीकी, आप अविनासी सिद्धरूप आप भए हैं ।।११७।।

अथ बहिरात्मा-कथन लिख्यते ।

मणिके मुकुट महा सिरपै विराजत हैं, हीए माहिं हार नाना रतनके पोये हैं ।
अलंकार और अंग अंग मैं अनूप बने, सुन्दर सरूप दुति देखैं काम गोए हैं ।
सुरतरु कुंजनिमैं सुरसंघ साथ देखैं, आवत प्रतीति ऐसी पुन्य बीज बोए है ।
करमके ठाठ ऐसैं कीने हैं अनेक बार, ज्ञान बिनु भाए यौं अनादिहीके सोए हैं ।।११८।।

सुरपरजायनिमैं भोग भाव भए जहां, सुख रंग राचौ रति कीनी परभावमैं ।
रंभा हाव भावनिको निरखि निहारि देखैं, प्रेम परतीति भई रमणिरमावमैं ।
देखि देखि देवनिके पुंज आय पाँय परैं, हियमैं हरष धरैं लगिनि लगावमैं ।
पर परपंचनिमैं संचिकै करम भारी, संसारी भयौ फिरै जु परके उपावमैं ॥११९॥

छप्पय ।

अजर अमर अविलिप्त, नष्ट भव भय जहँ नाहीं । देव अनंत अपार, ज्ञानधारक जगमाहीं ।
जिहिं वाइक जग सार, जानि जे भवदधि तरि हैं । गुरु निरगंथ महंत, संत सेवा सब करि हैं ।
देववाणि गुरु परखि यह, करि प्रतीति मनमैं धरैं । कहै दीपचंद ह्वै बंद सो, अविनासीसुखकौं वरैं ॥१२०॥

सवैया इकतीसा ।

धरैं गुणवृंद सुखकंद है सरूप मेरो, जामैं परफंदकौ प्रवेश नाहिं पाइए ।
देव भगवान चिदानंद ज्ञानजोति लीएं, अचल अनंत जाकी महिमा बताइए ।
परम प्रतापमैं न ताप भव भासतु है, अचल अखंड एक उरमैं लखाइए ।

अनुभौ अनूप रसपान लै अमर हूजे, सामतो सुथिर जम जुग जुग गाइए ॥१२१॥

चेतनाविलास जामैं आनन्दनिवास नित, ज्ञान परकास धरें देव अविनासी है।
चिदानन्द एक तूही मानतो निरंजन है, महा भयभंजन है सदा सुखरासी है।
अचल अखंड शिवनाथनकौ रमैया तू है, कहा भयौ जो तो होय रह्यौ भववासी है।
सिद्ध भगवान जैसौ गुणकौ निधान तू है, निहचै निहारि निधि आप परकासी है ॥१२२॥

रमणि रमावमाहिं रति मानि राच्यौ महा, मायामैं मगन प्रीति करै परिवारसौं।
विषैभोगमौज विषतुल्य सुधापान जानै, हित न पिछानै बंध्यौ अति भव भारसौं ॥१२३॥

एक इंद्रीआदि लै असैनी परिजंत जहां, तहां ज्ञान कहां रुक्यौ करम विकारमौं।
अबै देव गुरु जिनवाणीको संजोग जुर्यौ, मित्रपंथ साधौ करि आतमविचारसौं।
परपद आपौ मानि जगमैं अनादि भम्यौ, पायौ न सरूप जो अनादि सुखथान है।
राग दोष भावनिमैं भवथिति बांधी महा, बिन भेदज्ञान भूल्यौ गुणकौ निधानं है।
अचल अखंड ज्ञानजोतिकौ प्रकाश लीए, घटहीमैं देव चिदानन्द भगवान है।

केहे दीपचन्द आय इंदहूसे पाँय परैं, अनुभौ प्रसाद पद पावे निरवान हैं ॥१२४॥

दोहा

चिदलच्छन पहचानतै, उपजै आनन्द आप। अनुभौ सहज स्वरूपकौं, जामैं पुन्य न पाप ॥१२५॥

कवित्त इकतीसा

जगमैं अनादि यति जेते पद धारि आए, तेऊ सब तिरे लहि अनुभौ निधानकौं।
याके बिन पाए मुनिहू सो पद निंदित है, यह सुख सिंधु दरसावे भगवानकौं।
नारकी हू निकसि जे तीर्थंकरपद पावें, अनुभौ प्रभाव पहुंचावै निरवानकौं।
अनुभौ अनंत गुणके धरे याहीकौं, तिहुंलोक पूजे हित जानि गुणवानकौं ॥१२६॥
अनुभौ अखंड रस धाराधर जग्यौ जहां, तहां दुख दावानल रंच न रहतु हैं।
करमनिवास भववास घटा भानवेकौं, परम प्रचंड पौन मुनिजन कहतु है।
याकौ रस पीएं फिरि काहूकी इच्छा न होय, यह सुखदानी जगमैं महतु है।
आनँदकौ धाम अभिराम यह संतनकौं, याहीके धरैया पद सासतौ लहतु है ॥१२७॥

आतम–गवेषी संत याहीके धरैया जे हैं, आपमें मगन करैं आन न उपासना ।
विकलप जहां कोऊ नहीं भासतु है, याके रस भीने त्यागी सबै आन वासना ।
चिदानंद देवके अनंत गुण जेते कहे, जिनकी सकति सब ताहिमाहिं भासना ।
व्यय उतपाद ध्रुव द्रव्य गुण परजाय, महिमा अनंत एक अनुभौविलासना ॥१२८॥

दोहा ।

गुण अनंतके रस सबै, अनुभौ रसकेमाहिं । यातैं अनुभौ सारिखौ, और दूसरो नाहिं ॥१२९॥

सवैया इकतीसा

जगतकी जेती विद्या भासी कर रेखावत, कोटिक जुगांतर जो महा तप कीने हैं ।
अनुभौ अखंड रस उरमें न आयौ जो तौ, सिवपद पावै नाहिं पररस भीने हैं ।
आप अवलोकनिमैं आप सुख पाईयतु, पर उरझार होय परपद चीने हैं ।
तातैं तिहुंलोकपूज्य अनुभौ है आतमाकौ, अनुभवी अनुभौ अनूप रस लीने है ॥१३०॥

अडिल्ल ।

परम धरमके धाम जिनेश्वर जानिये । शिवपद प्रापति हेतु आप उर आनिये ॥
निहचै अरु व्यौहार जिथारथ पाइये । स्यादवादकरि सिद्धिपंथ शिव गाइये ॥१३१॥

सवैया इकतीसा ।

लक्षनके लखें बिनु लक्ष्य नहिं पाईयतु, लक्ष्य बिनु लखे कैसें लक्षण लखातु है ।
यातें लक्ष्य लक्षिनके जानिवेकौं जिनवानी, कीजिएं अभ्यास ज्ञान परकास पातु है ।
ऐसौ उपदेस लखि कीनौ है अनेक बार, तौहू होनहारमाहिं सिध्दि ठहरातु है ।
निहचै प्रमाण कीएं उद्यम विलाय जाय, दोउ नैविरोध कहु किम यौं मिटातु है ॥१३२॥
मानि यह निहचैकौ साधक व्यौहार कीजे, साधकके बाधे कहुं निहचौ न पाइये ।
जद्यपि है होनहार तद्यपि है चिन्ह वाकौ, साधि जाको साधन यौं लक्षण लखाइये ।
आए उर रुचि यह रोचक कहावै महा, रुचि उर आएं विनुरोचक न गाइये ।
अंतरंग उद्यमतैं आतमीक सिध्दि होत, मंदिरके द्वारि जैसें मंदिरमें जाईये ॥१३३॥

प्रकृति गएतैं वह आतमीक उद्यम है, सो तौ होनहार भए प्रकृति उठान है।
नाना गुण गुणी भेद सीख्यौं न सरूप पायौ, काल ले अनादि बहु कीनौ जो सयान है।
यातैं होनहार सार भाँति जग जानियतु, होनहार माहिं तातैं उद्यम विगान है।
चाहौ सोही करो सिद्धि निहचैके आए है है, निहचै प्रमाण यातैं सत्यारथ ज्ञान है॥१३४॥
तीरथसरूप भव्य तारण है द्वादशांग, वाणी मिथ्या होय तौ तौ काहे जिन भासी है।
जिनवानी जीवनकौं कीनौं उपगार यह, याकी रुचि कीएं भव्य पावै सुखरासी है।
करत उच्छेद याकौ कैसैं तत्त्व पाईयतु, मोक्षपंथ मिटै जीव रहै भववासी है।
निहचै प्रमाण तोउ जाही ताही भांति, अति अनुभौ दिढायौ गहि दीजिए अध्यासी है॥१३५॥
यह तौ अनादिहीकौ चाहत अभ्यास कीयौ, याकै नहीं सारै पावै कालकी लवधितैं।
जतनके साध्य सिद्धि होती तौ अनादिहीके, द्रव्यलिंग धारे महा अतिही सुविधितैं।
काज नहीं सर्यौ तातै कछू न बसाय याकौ, होनहार भए काज सीझै जथाविधितैं।
यासैं भावितव्यतौ सो काहूपै न लंघी जाय, करि है उपाय जो तौ नाना ये विविधितैं॥१३६॥

एक नै प्रणाम ह्वै तौ काहेकों जिनेंद्रदेव, कहै धनि जीवनकौं उद्यम बतावनी ।
तत्त्वकौं विचार सार वाणीहीतैं पाईयतु, वाणीके उथापे याकी दसा है अभावनी ।
मोक्षपंथ माधि साधि तिरे जिनवाणीहीतैं, यह जिनवाणी रुचैं याकी भली भावनी ।
याहीके उथापें भली भावनी उथापी जामैं, यह भली भावनी सो उद्यमतैं पावनी ॥१३७॥
उद्यम अनादिहीके कीए हैं न ओर आयौ, कहुं न मिटायौ दुख जनम मरणकौं ।
यौं तो केउ बेर जाय जाय गुरुपास जांच्यौ, स्वामी मेरा दुख मेटौ भवके भरणकौं ।
दीनी उन दीक्षा इनि लीनो भले भावकरि, समै विनु आए काज कैसैं ह्वै तरणकौं ।
यातैं कहै विविधि बनायकै उपाय ठानैं, बली काज जानि होनहारकी टरणकौं ॥१३८॥
जैसैं काहू नगरमैं गए विनु काज न ह्वै, पंथ बिनु कैसैं जाय पहुंचै नगरमैं ।
तैसैं विवहार नय निहचैकौ साधतु है, दीपकउद्योत वस्तु ढूढ लीजै घरमैं ।
साधक उच्छेद सिद्धि कोउ न बतावतु हैं, नीके मूनिहारि काहे पर जूठी हरमैं ।
अनादि निधान श्रुतकेवली कहत सोही, कीजिए प्रमाण मोखबधू होय करमैं ॥१३९॥

मोक्षबधू ऐसे जो तो याके कामाहिं होय, तौ तो केवलीके वैन सुने है अनादिके ।
जगत अगोचर अपूरव अनादिकौ है, उद्यम जे कीए जे जे भए सब वादिके ।
तातैं कहा सांचको उथापतु है जानतु ही, भोरो होय बैठो वैन मेटि मरजादिके ।
जो तौ जिनवाणी सरधानी है तो मानि मानि, वीतरागवैन सुखदैन यह दादिके ॥१४०॥
उद्यमके डारे कहूं साध्य सिद्धि कहीं नाहिं, होनहार सार जाको उद्यम ही द्वार है ।
उद्यम उदार दुखदोषको हरनहार, उद्यममैं सिद्धि वह उद्यम ही सार है ।
उद्यम विना न कहूं भावी भली होनहार, उद्यमकौं साधि भव्य गए भवपार है ।
उद्यमके उद्यमी कहाए भवि जीव तातैं, उद्यम ही कीजे कीयौ चाहै जो उद्धार है ॥१४१॥
आडंबर भारतैं उद्धार कहुं भयौ नाहीं, कही जिनवाणीमाहिं आप रुचि तारणी ।
चक्री भरतेश जाके कारण अनेक पाप, भए पैं तथापि तिर्यौ दसा आप धारणी ।
आनकौं उथापि एक जिनमत थाप्यो यौं, समंतभद्र तीर्थंकर होसी या विचारणी ।
कारणतैं कारिजकी सिद्धि परिणामहीतैं, भाषी भगवान है अनंत सुखकारणी ॥१४२॥

करि क्रिया कोरी कहुं जोरीसौं मुकति न ह्वै, सहज सरूप गति ज्ञानी ही लहतु हैं।
लहिकै एकांत अनेकांतकौ न पायौ भेद, तत्वज्ञान पाये विनु कैसेकैं महतु हैं।
सकल उपाधिमैं समाधि जो सरूप जानै, जगकी जुगतिमाहिं मुनिजन कहतु हैं।
ज्ञानमई भूमि चढि होइकै अकंप रहैं, साधक ह्वै सिद्ध तेई थिर ह्वै रहतु हैं ॥१४३॥
अविनाशी तिहुंकाल महिमा अपार जाकी, अनादि निधन ज्ञान उदैकौं करतु है।
ऐसे निज आतमाकौ अनुभौ सदैव कीजै, करम कलंक एक छिनमैं हरतु है।
एक अभिराम जो अनंत गुणधाम महा, सुद्ध चिदजोतिके सुभावकौं भरतु है।
अनुभौ प्रसादतैं अखंड पद देखियतु, अनुभौ प्रसाद मोक्षवधूकौं वरतु है ॥१४४॥
तिहुंकालमाहिं जे जे शिवपंथ साधतु हैं, रहत उपाधि आप ज्ञान जोतिधारी हैं।
देखैं चितमूरतिकौं आनँद अपार होत, अविनासी सुधारस पीवैं अविकारी हैं।
चेतना विलासकौ प्रकास सो ही सार जान्यौ, अनुभौ रसिक ह्वै सरूपके संभारी हैं।
कहै दीपचन्द चिदानंदकौं लखत सदा, ऐसैं उपयोगी आपपद अनुसारी हैं ॥१४५॥

अलख अखंड जोति ज्ञानकौ उद्योत लीएं, प्रगट प्रकास जाकौ कैसे ह्वै छिपाईये ।
दरसन-ज्ञानधारी अविकारी आतमा है, ताहि अवलोकिकैं अनंत सुख पाईये ।
सिवपुरी कारण निवारण सकल दोष, ऐसें भाव भएं भवसिंधु तिरि जाईये ।
चिदानंद देव देखि वाहीमें मगन हूजे, यातैं और भाव कोउ ठौर न अनाईये ॥१४६॥
करमके बंध जामैं कोउ नाहिं पाईयतु, सदा निरफंद सुखकंदकी धरणि है ।
सपरस रस गंध रूपतैं रहत सदा, आतम अखंड परदेसकी भरणि है ।
अक्षसैं अगोचर अनंत काल सासती है, अविनासी चेतनाकी होय न परणि है ।
सकति अमूरती बखानी वीतरागदेव, याके उर जानैं दुखदंदकी हरणि है ॥१४७॥
कर्म करतूतितैं अतीत है अनादिहीकी, सहज सरूप नहीं आन भाव करै है ।
लक्षन सरूपकी नै लक्षन लखावत है, तोऊ भेद भाव रूप नहीं विसतरै है ।
करता करम क्रिया भेद नहीं भासतु है, अकर्तृत्व सकति अखंड रीति धरै है ।
याहीके गवेषी होय ज्ञानमाहि लखि लीजै, याहीकी लखनि या अनंत सुख भरै है ॥१४८॥

करम संजोग भोग भाव नाहिं भासतु है, पदके विलासकौ न लेस पाईयतु है।
सकल विभावकौ अभाव भयौ सदाकाल, केवल सुभाव सुद्धरस भाईयतु है।
एक अविकार अति महिमा अपार जाकी, सकति अभोकतरि महा गाईयतु है।
याहीमें परम सुख पावन सधत नीके, याहीके सरूपमाहिं मन लाईयतु है ॥१४९॥
पर है निमित्त ज्ञेय ज्ञानाकार होत जहां, सहज सुभाव अति अमल अकंप है।
अतुल अबाधित अखंड है सुरस जहां, करम कलंकनिकी कोऊ नहीं झंप है।
अमित अनन्त तेज भासत सुभावहीमें, चेतनाकौ चिन्ह जामें कोऊकी न चम्प है।
परिनाम आतम सुसकति कहावत है, याके रूपमाहिं आन आवत न संप है ॥१५०॥
काहू कालमाहिं पररूप होय नहीं चरे, सहज सुभावहीसौं सुथिर रहतु है।
आनकाज कारण जे सबै त्यागि दीए जहां, कोऊ परकार पर भाव न चहतु है।
याहीतैं अकारण अकारिज सकतिहीकौं, अनादिनिधन श्रुत ऐसैं ही कहतु है।
परकी अनेकता उपाधि मेटि एकरूप, याकौ उर जानैं तेई आनन्द लहतु है ॥१५१॥

अपने अनन्त गुण रसकौ न त्यागि कैं, परभाव नहीं धरै सहजकी धारणा ।
हेय उपादेय भेद कहौ कहां पाइयतु, वचनअगोचरमैं भेद न उचारणा ।
त्याग उपादान सून्य सकति कहावै यामें, महिमा अनन्तके विलासका उधारणा ।
केवली उकत धुनि रहस रसिक जे हैं, याकौ भेद जानैं करैं करम निवारणा ॥१५२॥

दोहा।

गुण अनन्तके रस सवै, अनुभौ रसके माहिं। यातैं अनुभौ सारिखौ, और दूसरो नाहिं ॥१५३॥
पंच परम गुरु जे भए, जे ह्वैंगे जगमाहिं । ते अनुभौ परसादतै यामैं धोखौ नाहिं ॥१५४॥

सवैया इकतीसा।

ज्ञानावरणादि आठकरम अभाव जहां । सकल विभवकौ अभाव जहां पाइए ।
औदारिक आदिक सरीरकौ अभाव जहां, परकौ अभाव जहां सदा ही बताइए ।
याहीतैं अभाव यह सकति बखानियतु, सहज सुभावके अनन्त गुण गाइए ।
याके उर जानै तत्त्व आतमीक पाईयतु, लोकालोक ज्ञेय जहां ज्ञानमैं लखाइए ॥१५५॥

दरसन ज्ञान सुख वीरज अनंतधारी, सत्ता अविकारी ज्योति अचल अनंत है।
चेतना विलास परकास परदेशनिमैं, बसत अखंड लखै देव भगवंत है।
याहीमैं अनूप पद पदवी विराजतु है, महिमा अपार याकी भाषत महंत है।
सहज सुभाव सदा एक चिदरूप भाव, सकति अनंती जानै वंदै सब संत हैं ॥१५६॥
परजाय भावकौ अभाव समै समै होय, जलकी तरंग जैमैं लीन होय जलमैं।
याही परकार करै उतपाद व्यय धरै, भावकौ अभाव यहै सकति अचलमैं।
सहज सरूप पद कारण बखानी महा, वीतराग देव भेद लह्यौ निज थलमैं।
महिमा अपार याकी रुचि कीए पार भव, लहै भवि जीव सुख पावै ज्ञान कलमैं ॥१५७॥
अनागत काल परजाय भाव भए नाहिं, तेई समै समै होय सुखकौ करतु हैं।
याहीतैं अभाव भाव सकति बखानियतु, अचल अखंड जोति भावकौं भरतु हैं।
लच्छनिमैं लक्षण लखाइयतु याकौ महा, याके भाव अविनासी रसकौ धरतु हैं।
कहिये कहांलौं याकी महिमा अपार रूप, चिदरूप देखै निजगुण सुधरतु हैं ॥१५८॥

परकौ अभाव जो अतीत काल हो आयौ, अनागत कालमैं हू देखिए अभाव है ।
भाव नहीं जहां ताकौ कहिए अभाव तहां, ताहीकौ अभाव तातैं कीजे यो लखाव है ।
अभाव अभाव यातैं सकति बखानियतु, चिदानंद देव जाकौ सांचौ दरसाव है ।
याहीके लखैया लक्ष्य लक्षणकौं जानतु हैं, याके परसाद अविनासी भाव भाव हैं ॥१५९॥
काल जो अतीत जामैं जोई भाव ह्वै तौ जहां, सो ही भाव भावमाहिं सदाकाल देखिए ।
यातैं भाव भाव यहै सकति सरूपकी है, महिमा अपार महा अतुल विसेखिए ।
चिद सत्ता भावकौ लखाव सो है द्रव्यमैं, वह भाव गुणनिमैं सहज ही पेखिए ।
यातैं भाव भावकौ सुभाव पावैं तेई धन्य, चिदानंद देवके लखैया जेई लेखिए ॥१६०॥
स्वयं सिद्धि करता है निज परणामनिकौ, ज्ञान भाव करता स्वभावहीमैं कह्यौ है ।
सहज सुभाव आप करै करतार यातैं, करता सकति सुख जिनदेव लह्यौ है ।
निहचै विचारिए सरूप ऐसौ आपहीकौ, याके बिनु जानैं भवजालमाहिं बह्यौ है
करता अनंत गुण परिणामकेरो होय, ज्ञानी ज्ञानमाहिं लखि थिर होय रह्यौ है ॥१६१॥

आतम सुभाव करै करन कहावै सो ही, सुखकौ निधान परमाण पाईयतु है।
लक्षण सुभाव गुण पोषन पदारथकौं, ग्रंथ ग्रंथमाहिं जस जाकौ गाईयतु है॥
करम सकति काज आतम सुभाउ है, चिदानंद चिह्न महा यों बताइयतु है।
लक्षनतैं लक्ष सिद्धि कही जिन आगमैं, यातै भाव भावनाको भाव भाईयतु है ॥१६२॥
आप परिणामकरि आप पद साधतु है, साधन स्वरूप सो ही करण बखानिए।
आप मात्र रूप आप भवहीको सिद्धि होत, और भाव भए भावसिद्धि नहीं मानिए।
कारण सकति करै एकमैं अनेक सिद्धि, एक है अनेकमाहिं नीकैं उर आनिए।
निहचै अभेद नीकैं भेद नाहीं भासतु है, ज्ञानके सुभाव करि ताकौ रूप जानिए ॥१६३॥
आपने सुभाव आप आपकौं दए आप, आप लै अखंड रसधारा बरसावै है।
संप्रदान सकति अनंत सुखदायक है, चिदानंद देवके प्रभावकौ बढ़ावै है।
याहीमैं अनंत भेद नानाविध भासतु हैं, अनुभौसुरसस्वाद सहज दिखावै है।
पावन सकति ऐसी पावन परम होय, सारौ जग जस जाकौ जगि जगि गावै है ॥१६४॥

आपनौ अखंड पद सहज सुथिर महा, करै आप आपहीतैं यहै अपादान है।
मामतौ खिणक उपादान करै आपहीतैं, आप है अनंत अविनासी सुखथान है।
याहीतैं अनूप चिदरूप रूप पाइयतु, यातैं सब सकतिमैं परम प्रधान है।
अचल अमल जोति भावकौ उद्योत लीएं, जानै सो ही जान सदा गुणकौ निधान है ॥१६५॥
किरिया करम सब संप्रदान आदिककौ, परम अधार अधिकरण कहीजिए।
दरसन ज्ञान आदि बीरज अनंत गुण, वाहीके अधार यातैं वामैं थिर हूजिये।
याहीकी महतताई गाई सब ग्रंथनिमैं, सदा उपादेय सुद्ध आतम गहीजिए।
सकति अनंतकौ अधार एक जानियतु, याहीतैं अनंत सुख सासतौ लहीजिए ॥१६६॥
परकौ दरब खेत काल भाव चार्यौं यह, सदाकाल जामैं पर सत्ताकौ अभाव है।
याहीतैं अतत्व महा सकति बखानियतु, अपनी चतुक सत्ता ताकौ दरसाव है।
आनकौ अभाव भएं सहज सुभाव है है, जिनराज देवजीकौ बचन कहाव है।
याके उर जानैंतैं अनंत सुख पाईयतु, एक अविनासी आप रूपकौ लखाव है ॥१६७॥

आतमसरूप जाके कहै हैं अनंत गुण, चिदानंद परिणति कही परजाय है।
दोऊ माहिं व्यापिकैं सदैव रहै एक रूप, एकत्व सकति ज्ञानी ज्ञानमैं लखाय है।
सुखकौ समुद्र अभिराम आप दरसावै, जाकै उर देखै सब दुबिधा मिटाय है।
सहज सुरसकौ विलास यामैं पाईयतु, सदा सब संतजन जाके गुण गाय है ॥१६८॥
एक द्रव्य व्यापिकैं अनेक गुण परजाय, अनेकत्व सकति अनंत सुखदानी है।
लक्षन अनेकके विलास जे अनंत महा, करि है सदैव याही अति अधिकानी हैं।
प्रगट प्रभाव गुण गुणके अनंते करैं, ऐसी प्रभुताई जाकी प्रगट बखानी है।
महिमा अनंत ताकी प्रगट प्रकाशरूप, परम अनूप याकी जगमैं कहानी है ॥१६९॥
देखत सरूपकै अनंत सुख आतमीक, अनुपम ह्वै है जाकी महिमा अपार है।
अलख अखंड जोति अचल अबाधित है, अमल अरूपी एक महा अविकार है।
सकति अनंत गुण धरै हैं अनंत जेते, एकमै अनेक रूप फुरै निरधार है।
चेतना झलक भेद धरैं हैं अभेदरूप, ज्ञायक सकति जानैं जाकौ विसतार है ॥१७०॥

स्वसंवेद ज्ञान उपयोगमैं अनंत सुख, अतिंद्री अनूपम है आपका लखावना।
भवकै विकार भार कोऊ नहीं पाईयतु, चेतना अनंत चिन्ह एक दरसावना।
ऐसी अविकारता सरूपहीमैं सासती है, सदा लखि लीजैं तातैं सिद्धपद पावना।
आतमीक ज्ञानमाहिं अनुभौ विलास महा, यह परमारथ सरूपका बतावना ॥१७१॥
ज्ञान गुण जानैं जहां दरसन देखतु है, चारित सुथिर है सरूपमैं रहतु है।
बीरज अखंड वस्तु ताकौं निहपन्न करै, परम प्रभाव गुण प्रभुता गहतु है।
चेतना अनंत व्यापि एक चिद्रूप रहै, यह है विभूत ज्ञाता ज्ञानमैं लहतु है।
महिमा अपार अविकार है अनादिहीकी, आपहीमैं जानैं जेई जगमैं महतु है ॥१७२॥
सहज अनूप जोति परम अनूपी महा, तिहुँलोकभूप चिदानंद-दशा- दरसी।
एक सुद्ध निहचै अखंड परमातमा है, अनुभौ विलास भयौ ज्ञानधारा बरसी।
अपनौं सरूप पद पाएहीतैं पाई यह, चेतना अनंत चिन्ह सुधारस सरसी,
अतुल सुभाव सुख लह्यौ आप आपहीमैं, याहीतैं अचल ब्रह्म पदवीकौं परसी ॥१७३॥

अरुझि अनादि न सरूपकी सँभार करी, पर पदमाहिं रागी भए पग पगमैं ।
चहुँ गतिमाहिं चिर दुःखपरिपाटी सही, सुखकौं न लेश लह्यौ भम्यौ अति जगमैं ।
गुरुउपदेश पाय आतम सुभाव लैहै, सुद्धादिष्टि देहै सदा सांचै ज्ञान-नगमैं ।
महिमा अपार सार आपनौं सरूप जान्यौ, तेई सिवसाधक है लागे मोक्ष-मगमैं ॥१७४॥
ज्ञानमई मूरतिमैं ज्ञानी ही सुथिर रहै, करै नहीं फिरि कहुं आनकी उपासना ।
चिदानन्द चेतन चिमतकार चिन्ह जाकौ, ताकौ उर जान्यौ मेटी भरमकी वासना ।
अनुभौ उल्हासमैं अनंत रस पायौ महा, सहज समाधिमैं सरूप परकासना ।
बोध-नाव बैठि भव-सागरकौं पार होत, शिवकौं पहुंच करै सुखकी विलासना ॥१७५॥
ब्रह्मचारी गृही मुनि क्षुल्लक न रूप ताकौ, क्षत्री वैस्य ब्राह्मण न सुंदर सरूप है ।
देव नर नारक न तिरजग रूप जाकौ, वाकै रूपमाहिं नाहिं कोऊ दोरधूप है ।
रूप रस गंध फांस इनतै वो रहै न्यारौ, अचल अखंड एक तिहुंलोकभूप है ।
चेतनानिधान ज्ञानजोति है सरूप महा, अविनासी आप सदा परम अनूप है ॥१७६॥

विधि न निषेध भेद कोउ नहीं पाईयतु, वेद न वरण लोकरीति न बताइए ।
धारणा न ध्यान कहुं व्यवहारीज्ञान कह्यौ, विकलप नाहिं कोउ साधन न गाइए ।
पुन्य पाप ताप तेउ तहां नहीं भासतु हैं, चिदानन्दरूपकी सुरीति ठहराइए ।
ऐसी सुद्धसत्ताकी समाधिभूमि कही जामैं, सहज सुभावकौं अनंतसुख पाइए ॥१७७॥
विषैसुख भोग नाहीं रोग न विजोग जहां, सोगको समाज जहां कहिये न रंच है ।
कोध मान माया लोभ कोउ नहीं कहे जहां, दान शील तपको न दीसै परपंच है ।
करम कलेस लेस लख्यौ नहीं पैरै जहां, महा भवदुःख जहां नहीं आगि अंच है ।
अचल अकंप अति अमित अनंत तेज, सहज सरूप सुद्ध सत्ताहीकौ संच है ॥१७८॥
थापन न थापना उथापना न दीसतु है, राग द्वेष दोऊ नहीं पाप पुन्य अंस है ।
जोग न जुगति जहां भुगति न भावना है, आवना न जावना न करमकौ वंस है ।
नहीं हारि जीति जहां कोऊ विपरीति नाहिं, सुभ न असुभ नहीं निंदा परसंस है ।
स्वसंवेदज्ञानमैं न आन कोऊ भासतु है, ऐसौ बनि रह्यो एक चिदानंद हंस है ॥१७९॥

करण करांवणको भेद न बताईयतु, नानावत भेम नहीं नहीं परदेस है।
अधो मध्य ऊरध विसेख नहीं पाईयतु, कोउ विकलपकेरो नहीं परवेस है।
भोजन न वास जहां नहीं वनवास तहां, भोग न उदास जहां भवकौ न लेम है।
स्वसंवेद ज्ञानमैं अखंड एक भासतु है, देव चिदानन्द सदा जगमैं महेस है ॥१८०॥
देवनके भोग कहुं दीसैं नहीं नारकमैं, सुरलोकमाहिं नहीं नारककी वेदना।
अंधकारमाहिं कहुं पाइये उद्योत नाहि, परम अणूकेमाहिं भासतु न वेदना।
आतमीक ज्ञानमैं न पाईये अज्ञान कहुं, वीतराग भावमैं सरागकी निषेदना।
अनुभौ विलासमैं अनंत सुख पाईयतु, भवके विकारताकी भई है उछेदना ॥१८१॥
आगतैं पतंग यह जलसेती जलचर, जटाके बढायें सिद्धि ह्वै तौ बट धरै हैं।
मुंडनतैं उरणिये नगन रहेतैं पशु, कष्टकौं सहेतैं तरू कहुं नाहिं तरैं हैं।
पठनतैं शुक बक ध्यानके किएतैं कहुं, सीझै नाहिं मुनैं यातैं भवदुख भरै हैं।
अचल अबाधित अनुपम अखंड महा, आतमीक ज्ञानके लखैया सुख करै हैं ॥१८२॥

तीनमैं तियाल राजू खेलत अनादि आयौ, अरुझि अविद्या माहिं महा रति मानी है।
अपनैं कल्याणकौं न अंगीकार करै कहुं, तत्वसौं विमुख जगरीति सांची जानी है।
इंद्रजालवत भोग वंचिकैं विलाय जाय, तिनहीकी चाहि करै ऐसौ मूढ प्रानी है।
ऐसी परबुद्धि सब छिनहीमैं छूटत है, आप पद जानैं जौ तौ होय निज ज्ञानी है ॥१८३॥
तिहुंलोक चालै जातैं ऐसौ वज्रपात परै, जगतके प्राणी सब क्रिया तजि देतु हैं।
समकिती जीव महा साहस करत यह, ज्ञानमैं अखंड आप रूप गहि लेतु है।
सहज सरूप लखि निर्भय अलख होय, अनुभौ विलास भयौ समतासमेतु हैं।
महिमा अपार जाकी कहि है कहांलौं कोय, चेतन चिमतकार ताहीमैं सचेतु है ॥१८४॥
कमलनी पत्र जैसैं जलसेती बंध्यौ रहै, याकी यह रीति देखि नय व्यवहारमैं।
जलकौं न छीवैं वह जलसौं रहत न्यारौ, सहज सुभाव जाकौ निहचै विचारमैं।
तैसैं यह आतमा बंध्यौ है परफंदसेती, आपणी ही भूलि आपौ मान्यौ अरुझारमैं।
पाएं परमारथके परसौं न पग्यौ कहुं, आपनौ अनंत सुख करै समैसारमैं ॥१८५॥

पदमनीपत्र सदा पयहीमैं पर्यौ रहै, सब जन जानैं वाकै पयकौं परस है ।
अपने सुभाव कहुं पयकौं (?) न परसै है, सहज सकति लीएं सदा अपरस है ।
तैसैं परभाव यह परमि मलीन भयौ, लियौ नहीं आपसुख महा परवस है ।
निहचै सरूप परवस्तुकौं न परसै है, अचल अखंड चिद एक आप रस है ॥१८६॥
जैसैं कुंभकार करमाहिं गारपिंड लेय, भाजन बनावै बहु भेद अन्य अन्य है ।
माटीरूप देखैं और भेद नहीं भासतु है, सहज सुभ वहीतैं आपही अनन्य है ।
गतिगतिमाहिं जैसैं नाना परजाय धरै, ऐसो है सरूप सो तौ व्यवहारजन्य है ।
अन्य संगमेती यह अन्यमो कहावत है, एकरूप रहै तिहुंलोक कहै धन्य है ॥१८७॥
सिंधुमैं तरंग जैसैं उपजि विलाय जाय, नानावत वृद्धि हानि जामैं यह पाईए ।
अपनैं सुभाव सदा सागर सुथिर रहै, ताकौं व्यय उतपाद कैसैं ठहराइए ।
तैसैं परजाय माहिं होय उतपति लय, चिदानन्द अचल अखंड सुद्ध गाईए ।
परम पदारथमैं स्वारथ सरूपहीकौ, अविनासी देव आप ज्ञानजोति ध्याईए ॥१८८॥

चेतन अनादि नव तत्वमैं गुपत भयौ, सुद्ध पक्ष देखैं स्वसुभावरूप आप है ।
कनक अनेक वान भेदकौं धरत तोऊ, अपनैं सुभावमैं न दूसरो मिलाप है।
भेदभाव धरहू अभेदरूप आतमा है, अनुभौ किएतैं मेटै भवदुखताप है ।
जानत विशेष यौ असेष भाव भासतु है, चिदानंद देवमैं न कोऊ पुण्य पाप है ॥१८९॥
फटिकके हेठि जब जैसौ रंग दीजियत, तैसौ प्रतिभासै बामैं वाहीकौसो रंग है ।
अपनौ सुभाव सुद्ध उज्जल विराजमान, ताकौं नहीं तजै और गहै नहिं संग है ।
तैसैं यह आतमाहू परमाहिं परही सौं—भासैं, पैं सदैव याकौ चिदानंद अंग है ।
याहीतैं अखंड पद पावै जगमाहिं जेई, स्यादवादनय गहै सदा सरबंग है ॥१९०॥

छप्पय ।

परम अनूपम ज्ञानजोति लछमीकरि मंडित । अचल अमित आनंद सहजतैं भयौ अखंडित ।
सुद्ध समयमैं सार रहितभवभार निरंजन ॥ परमातम प्रभु पाय भव्य करि है भवभंजन ।
महिमा अनंत सुखसिंधुमैं, गणधरादि वंदित चरण । शिवातियवर तिहुंलोकपति जय ३ जिनवरसरण

दोहा।

सकल विरोध विहंडनी स्यादवादजुत जानि। कुनयवादमतखंडनी, नमों देवि जिनवानि ॥१९२॥

अथ ग्रंथ-प्रशंसा।

(सवैया इकतीसा)

अलख अराधन अखंड जोति साधनसरूपकी समाधिको लखाव दरसावै है।
याहीकै प्रसाद भव्य ज्ञानरस पीवतु हैं, सिद्धसौ अनूप पद सहज लखावै है।
परम पदारथके पायवेकौं कारण हैं, भवदधितारणजहाज गुरु गावै है।
अचल अनंत सुख-रतन दिखायवेकौं, ज्ञानदरपण ग्रंथ भव्य उर भावै है ॥१९३॥

दोहा ।

आपा लखवैकौं यहै, दरपणज्ञान गिरंथ। श्रीजिनधुनि अनुसार है, लखत लहै शिवपंथ ॥१९४॥

परम पदारथ लाभ है, आनंद करत अपार। दरपणज्ञान गिरंथ यह, कियौ दीप अविकार ॥१९५॥

श्रीजिनवर जयवंत है,सकल संत सुखदाय। सही परम पदकौं करै, है त्रिभुवनके राय ॥१९६॥

इति श्री शाह दीपचन्द साधर्मी कृत ज्ञानदर्पण ग्रन्थ समाप्त ।

॥ श्रीरस्तु ॥

स्वरूपानन्द

दोहा

परमदेव परमातमा, अचल अखण्ड अनूप ।
विमल ज्ञानमय अतुल पद, राजत ज्योतिसरूप ॥१॥

सवैया, २३

एक अनादि अनूप वण्यौ नहि, काहू कियो अरु ना विछुरैगौ ।
या जग के पद ये पर है सब, ना करै ना कर नाहि करैगौ ॥
वस्तु सौ वस्तु अवस्तु न वस्तुसौं, नांहीं टर्‌यो अरु नाहि टरैगौ ॥
आप चिदानन्द के पदकौं सुधर्‌या, यौं धरैं अरु आगूं धरैगौ ॥२॥

आप अनादि अखण्ड विराजत, काहू पै खण्ड कियो नहीं जै है ।
जो भव मैं भटक्यौ तौ उसास तौ, ज्ञानमई पद आर न पै है ॥
चेतन तै न अचेतन ह्वै कहूं, यौं सरधान किये सुख लै हैं ॥
'दीप' अनूप सरूप महा लखि, तेरौ सदा जग मैं जस ह्वै है ॥३॥
या जग मैं यह न्याय अनादि कौ, काहू की वस्तु कौं कोउ न छीवैं ।
देह मलीन मैं लीन ह्वै दीन ह्वै, देखै महादुख्ख आप सदीवैं ॥
याकी लगनि करै फिर वै दुख, देखि है या भव माहि अतीवैं ।
याही तैं आपकी आप गहैं निधि, ज्ञानी सदा सुख अमृत पीवैं ॥४॥
कोरि अनंत कहो किम तौं कहुं, तू पर कौं मति ना अपनावैं ।
ईश्वर आपहि आप वर्ण्यौ तुव, लागि पराश्रय क्यौं दुख पावैं ॥
धारि समान सुसीख धरौ उरि, श्रीगुरुदेव यौं तोहि बतावै ।
संत अनेक तिरे इह रीति सौं, याके गहें तू अमर कहावैं ॥५॥

सवैया, ३१

चिर ही तैं देव चिदानंद सुखकंद वर्णो, धरैं गुणवृंद भवफंद न बताइये ।
महा अविकार रस मैं सार तुम राजत हौं, महिमा अपार कहौं कहां लगि गाइये ॥
सुख कौं निधान भगवान अमलान एक, परम अखंड जोति उर मैं अनाइये ।
अतुल अनूप चिदरूप तिहुंलोक भूप, ऐसौ निज आप रूप भावन मैं भाइये ॥६॥

सवैया, २३

आप अनूप सरूप बण्यौ, परभावन कौं तुव चाहत काहे ।
धरि अमृत मेटन कौं तिस, भाडलीकौ लखि ज्यौं सठ जाहे ॥
तैसौं कहा न करौ मति भूलि, निधान लखौ निज ल्यौकिन लाहे ।
लोक के नाथ या सीख लहौ मति, भीख गहौ हित जो तुम चाहै ॥७॥
तेसै सरूप अनादि आगूं गहै, है सदा सासतौ सो अबही हैं ।
भूलि धरैं भव भूलि रह्यौ अब, मूल गहौं निज वस्तु वही है ॥

अजाणि तैं और ही जाणि गही सुध, वाणिकी हाणि न होय कही है।
भोरि भई सुभई वह भोरि, सरूप अबैं सुसंभारि सही है ॥८॥
तेरी ही वाणि कुं वाणि परी अति, ओर ही तैं कछु ओर गही है।
सदा निज भाव कौ ह्वै न अभाव, सुभाव लखाव करे ही लही है ॥
बिना पुन्य पापन कौं भव भाव, अनूपम आप सु आप मही है।
भोरि भइ सुभई वह भोरि, अबै सुसरूप संभारि सही है ॥९॥
तेरी ही वोर कौं होय धुकै किन, काहे कौं ढूंढत जात मही है।
है घर मैं निधि जाचत है पर, भूलि यहै नहीं जात कही है ॥
तू भगवान फिरै कहूं आन, बिना प्रभु जाणि कुवाणि गही है।
भोरि भई सुभई वह भोरि, अबै लखि दीप सरूप सही है ॥१०॥
लगे ही लगे पर माहि पगे, ये सगे लखि कै निज वोर न आये।
लोक के नाथ प्रभू तुम आथ, किये पर साथ कहा सुख पाये ॥

देखौ निहारिकैं आप संभारि, अनूपम वै गुण क्यौं बिसराये।
अहो गुणवान अबैं धूरौं ज्ञान, लहा सुख सों भगवान बताये ॥११॥
बानर मूंठि न आपही खोलैं, कांच के मंदिर स्वान भुसायें।
भाडली कौं लखि दौरत हैं मृग, नैंक नहीं जल देत दिखाये॥
सुक न नलिनी दिढ त पकरी, भूलि तैं आपही आप फंदाये।
बिनु ज्ञान दुखी भव माहि भये, सो ही सुखी जिहि आप लखाये॥१२॥
वारि लखें घन हूं बरषै, निजपक्ष मैं चन्द करै परकासा।
रितु कौं लखिकैं वनराय फलैं, जानै समौं पसू हूं ग्रहै वासा॥
सीप हूं स्वाति नक्षत लखै सुपरैं जल बूंद ह्वै मुक्तविकासा।
पूज्य पदारथ यो समौं ना लखै, यौं जग मैं है अजब तमासा॥१३॥
देव चिदानन्द है सुखकन्द, लियें गुणवृन्द सदा अविनासी।
आनन्दधाम महा अभिराम, तिहूं जग स्वामि सुभाव विकासी॥

हैं अमलान प्रभू भगवान, नहीं पर आंन हैं ज्ञान प्रकासी ।
सरूप विचारि लखैं यह सन्त, अनूप अनादि हैं ब्रह्म विलासी ॥१४॥
नहीं भवभाव विभाव जहां, परमातम एक सदा सुखरासी ।
वेद पुराण बतावत हैं जिहिं, ध्यावत हैं मुनि होय उदासी ॥
ज्ञानसरूप तिहूं जगभूप, वर्ण्यौ चिद्रूप है ज्योतिप्रकासी ।
सुरूप विचारि लखै यह सन्त, अनूप अनादि हैं ब्रह्मविलासी ॥१५॥

सवैया, ३१

नहीं जहां क्रोध मान माया लोभ है कषाय, जगतको जाल जहां नहीं दरसाय हैं ।
करम कलेस परवेस नहीं पाईयत, जहां भव भोग को संजोग न लखाय हैं ।
जहां लोक वेद तिया पुरुष न पुंसक ये, बाल वृद्ध जुवान भेद कोउ नहीं थाय है ।
काल न कलंक कोउ जहां प्रतिभासतु हैं, केवल अखंड एक चिदानन्दराय है ॥१६॥
जहां भव भोग को विलास नहीं पाईयत, राग दोष दोउ जहां मूलि हूं न आय है ।

जग उतपति जहां प्रल न बताइयत, करम भरम सब दूरि ही रहाय हैं ॥
साधन न साधना न काहू की अराधना है, निराबाध आप रूप आप थिरथाय हैं ॥
सहज प्रकास जहां चेतना विलास लीयें, केवल अखंड एक चिदानंदराय हैं ॥१७॥
मोह की मरोर कौ न जोर जहां भासतु हैं, नाहि परकासतु हैं पर परकासनां ।
करम कलोल जहां कोउ नहीं आवत हैं, सकल विभाव की न दीसत विकासनां ॥
आनंद अखंड रस परखै सदैव जहां, होत है अनंत सुखकंद की विलासनां ।
ज्ञान दिष्टि धारि देखि आप हियै राजतु हैं, अचल अनूप एक चिदानंद भासनां ॥१८॥
देव नारक ये तिरजग ठाठ सारे सो तो, एक तेरी भूलि ही का फल पावनां ।
तू तौं सत चिदानंद आपकौं पिछानैं नाहिं, राग दोष मोह केरी करत उपावनां ॥
पर की कलोल म न सहज अडोल पावै, याहीतैं अनादि कीना भव भटकावनां ।
आनंद के कंद अब आपकौं संभारि देखि, आतमीक आप निधि होय विलसांवनां ॥१९॥
तू ही ज्ञानधारी क्या भिखारी भयौ डोलत हैं, सकति संभारि सिवराज क्यों न करै है ।

तू ही गुणधाम अभिराम अतिआनंद मैं, आप भूलि का हम हा सब दुख भरै हैं।
तू ही चिदानन्द सुखकंद सदा सासतौ हैं, दुखदाई देहसौं सनेह कहा धरै है॥
देवन के देव जौ तौ आप तू लखावै आपतौ तौ भव बाधा एक छिन माहि हरै है ॥२०॥
सहज आनंद सुखकंद महा सासतौ है, तौ पद तोही मै विराजत अनूप है ।
ताहि तू विचारि और काहे पर ध्यावत है, परम प्रधान सदा सुद्ध चिदरूप है ॥
अचल अखंड अज अमर अरूपी महा, अतुल अमल एक तिहुं लोक भूप हैं ।
आन धंध त्यागि देखि चेतना निधान आप, ज्ञानादि अनंत गुण व्यकत सरूप है ॥२१॥
कह्यौ बार बार सार सहज सरूप तेरौ, सुखरासी सुद्ध अविनासी वणि रह्यौ है ।
दरसन ज्ञान अमलान है अनूप महा, परम प्रधान भगवान देव कह्यो है ॥
सदा सुखथान केरौ नायक निधानगुण, अतुल अखंड ज्ञानी ज्ञान मांहि गह्यो है ।
और तजि भाव यो लखाव करि निहचै मैं, स्वसंवेद भाव यो हमारौ हम लह्यौ है ॥२२॥

दोहा।

परम अनंत अखंड अज, अविनासी सुखधाम,
प्रभु वंदत पद निज लहैं, गुण अनूप अभिराम ॥२३॥
श्रीजिनवर पद बंदिकैं, ध्यान सार अविकार।
भवि हित काजैं करतु हौं, धरि भवि ह्वैं भवपार ॥२४॥

सवैया, ३१

सिद्धथांन मांहि जेते सिद्ध भये ते ते मही, आतमीक ध्यान तैं अनूप ते कहाये हैं।
धारिकैं धरमध्यान सुर नर भले भये, आरतिकौं ध्यान धारि तिरजंच थाये है ॥
रौद्र ध्यांन सेती महा नारकी भये हैं जहां, विविध अनेक दुख घोर वीर पाये हैं।
संसारी मुक्त दोउ भये एक ध्यानहीतैं, सुद्धध्यान धारि जो तो स्वगुण सुहाये हैं ॥२५॥
आप अविनासी सुखरासी हैं अनादिहीकौं, ध्यान नहीं धर्‍या तातैं फिर्‍यौ तू अपार है।
अब तू सयानौं होहु सुगुरु बतावतु हैं, आप ध्यान धरै तौ तौ लहैं भवपार हैं ॥

चिदानन्दरूप जाका अविनाशी राज दे हैं, यातैं गुरुदेव यों बखान्यौ ध्यान सार हैं ।
अतुल अबाधित अखंड जाकी महिमा है, ऐसौ चिदानंद पावै याकौं उपकार है ॥२६॥
साम्यभाव स्वारथ जु समाधि जोग चित्तरोध, शुद्ध उपयोग की दरणि ढार ढरै है ।
लय प्रसंज्ञात मैं न वितर्क वीचार आवै, वितर्क वीचार अस्मि आनंदता करै है ॥
परकौ न अस्मि कहैं परकौ न सुख लहैं, आपकौं परखि कैं विवेकता कौ धरै है ।
आतम धरम मैं अनंत गुण आतमा के निहचै मैं पर पद परस्यौ न परै है ॥२७॥

दोहा ।

एक असुद्ध जु शुद्ध हैं, ध्यान दोय परकार । शुद्ध धरै भवि जीव है, अशुध धरै संसार ॥२८॥
शुद्ध ध्यान परसाद तैं, सहज शुद्ध पद होय । ताकौ वरणन अब करौं दुख नहीं व्यापै कोय ॥२९॥

सवैया, ३१

प्रथम धरम ध्यान दूजो है सुकल ध्यान, आगम प्रमाण जामैं भले दोउ ध्यान हैं ।
पदस्थ पिंडस्थ सख रूपस्थ रूपातीत, अध्यातम विवक्षा मांहि ध्यान ये प्रमाण हैं ॥

मनकौ निरोध महा कीजियतु ध्यानमांहि, यातैं सब जोगनमैं ध्यान बलवान है।
पौन वसि कीबे सेती मन महा वसि होय, यातैं गुरुदेव कहै पवन विज्ञान हैं ॥२०॥
परिणाम नै निक्षेप कहैं सब ध्यान कीजै, सब ही उपायन मैं यो उपाय सार है।
देवश्रुत गुरु सब तीरथ जु प्रतिमाजी, चिदरूप ध्यान काजै सेवै गुणधार हैं ॥
विवहार विधा सोहू एकागर तातैं सधै, तातैं ध्यान परधान महा अविकार है।
केवली उकति वेद याके गुण गावत हैं, ऐसौ ध्यान साधि सिद्ध होय सुखकार है ॥२१॥
आज्ञा भगवान की मैं उपादेय आप कह्यो, तामैं थिर हूजै यह आज्ञाविचै ध्यान है।
करमकौं नास करै जाही के प्रभाव सेती, ताकौ ध्यान कह्यौ सुखकारी भगवान हैं ॥
करमविपाक मैं न खेदखिन होय कहूं ऐसैं भिज जानै तीजौ ध्यान परवान है।
संसथान लोक लखि लखै निज आतमा कौं, ध्यान के प्रसाद पद पावैं सुखवान हैं ॥२२॥
दरवि सौं गुण ध्यावै गुणन तैं परजाय, अरथांतर सदा यो भेद कह्यौ ध्यान कौं।
ज्ञान हौं दरशन हौं शवद सौं शब्दान्तर अस्मि शब्द रहै भेद जोगांतर थान कौं ॥

प्रथक्त्ववितर्क के ह्वै भेद ये विचार लीयें, ज्ञानवान जानैं भेद कह्यौ भगवान कौं।
अतुल अखंड ज्ञानधारी देव चिदानंद, ताकौं दरसावैं पद पावैं निरवाणकौं ॥३३॥
एकत्वरूप मांहि थिर ह्वै स्वपद शुद्ध, कीजे आप ज्ञान मात्र एक निजरूप मे।
घातिकर्म नाश करि केवल प्रकाश धरि, सूक्ष्म ह्वैं जाग सुख पावैं चिदभूप मैं॥
मेटि विपरीत क्रिया करम सकल भांनि, परम पद पाय नहीं परै भौ कूप मैं।
यातैं यह ध्यान निरवांण पहुंचावत है, अचल अखंड जोति भासत अनूप मे ॥३४॥
मंत्र पद साधि करि महा मन थिर धरि, पदस्थ ध्यान साधतैं स्वरूप आप पाइये।
आपनां स्वरूप प्रभुपद सोही पिंडमै विचारिकै अनूप आप उरमैं अनाइये।
समवसरण विभौ सहित लखीजै आप, ध्यानमै प्रतीति धरि महा थिर थाइये।
रूप मौं अतीत सिद्धपद सौं जहां ध्यान मांहि ध्यावै सोही रूपातीत गाइये ॥३५॥
पवन सब साधिकैं अलख अराधियत, सोही एक साधिनी स्वरूपकाजि कही है।
अविनासी आनंद मैं सुखकंद पावतेई, आगम विधानतैं ज्यां ध्यान रति लही है॥

ध्यान के धरैया भवसिंधु के तिरैया भये, जगत में तेऊ धन्य ध्यान विधि चही है।
चेतना चिमतकार सार जो स्वरूपही कौ, ध्यान ही तैं पावै ढूंढि देखौ सब मही है ॥३६॥

दोहा।

परम ध्यान कौ धारि कै, पावैं आप सरूप। ते नर धनि है जगत मैं, शिवपद लहैं अनूप ॥३७॥
करम सकल क्षय होत हैं, एक ध्यान परसाद। ध्यान धारि उधरे बहुत, लहि निजपद अहिलाद ॥३८॥
अमल अखंडित ज्ञान मैं, अविनासी अविकार। सो लहिये निज ध्यानतें जो त्रिभुवनमैं सार ॥३९॥

सवैया, ३१

गुण परिजाय कौ सुभाव धरि भयो द्रव्य, गुण परिजाय भये द्रव्य के सुभावतैं।
परिजाय भाव करि व्यय उतपाद भये, ध्रुव सदा भयो सो तो द्रव्य के प्रभावतें ॥
व्यय उतपाद ध्रुव सत्ता ही मे साधि आये, सत्ता द्रव्य लक्षण है सहज लखावतें।
याही अनुक्रम परिपाटी जानि लीजियतु, पावै सुखधाम अभिराम निज दावतें ॥४०॥
सहज अनंतगुण परम धरम सो हैं, ताहीकौं धरैया एक राजत दरव हैं।

गुणकौं प्रभाव निज परिजाय शकतितैं, व्यापियो जितेक गुण आपके सरव हैं ॥
परम अनंतगुण परिजंत सघ ऐसैं, जानै ज्ञानवान जाकै कछु न गरव है।
याही परकार उपयोग मांहि सार पद, लखि लखि लीजे जगि बडो यो परव है ॥४१॥
एक परदेश मैं अनंतगुण राजतु हैं, एक गुण मैं शकति परजै अनंत है।
वहै परिजाय काज करै गुण गुणही कौ, ऐसौ राज पावै सदा रहै जयवंत हैं ॥
सुख कौ निधान यो विधान है अतीव भारी, अविकारी देव जाकौं लखैं सब संत हैं।
याही परकार शिव सारपद साधि साधि, भये हैं अनंत सिद्ध शिवतिया कंत है ॥४२॥
एक गुण सत्ता सो तौं दरवि कौं लक्षण है, सो ही गुण सत्तातैं अनंत भेद लया है।
एक सत वीरजि यो सामान्यविशेषरूप, परिजाय भेदतैं अनंत भेद भया है ॥
ऐसी भेद भावनातैं पावना अलख की हैं, अलख लखावनैंतैं भवरोग गया है।
भव अपहार ही तैं शिवथान मांहि जाय, परम अखंडित अनंत सिद्ध थया है ॥४३॥
चारित चखैया ज्ञान स्वपद लखैया महा सम्यक्त्व प्रधान गुण सबै शुद्ध करै हैं।

दरसन देखि निरविकल्प रस पीयें, परम अतीन्द्री सुख भोग भाव धरै है ॥
महिमानिधान भगवान शिवथान मांहि, सासतौ सदैव रहि भव मैं न परै है ।
ऐसौ निज रूप यो अनूप आप वणि रह्यौ, गहैं जेही जीव काज तिनही कौं सरै हैं ॥४४॥
स्वपद लखावै निज अनुभौ कौं पावैं शिव-थ न मांहि जावैं; नहीं आवैं भव जाल मैं !
ज्ञानसुख गहैं निज आनंद का लहैं अविनासी होय रहै एक चिदज्योति ख्याल मैं ॥
ऐसो अविकारी गुणधारी देखि आपही हैं आपने सुभाव करि आप देखि हाल मैं ।
तिहुंकाल मांहि संत जेतेक अनंत कहै, ते ते सब तिरे एक शुद्ध आप चाल मैं ॥४५॥
सहज ही बनें तैं आप पद पावना है, ताके पावै कौ कहि कहैं विषमताई है ।
आप ही प्रकास करैं कौंन पै छिपायो जाय, ताकौं नहीं जानैं यह अजरजिताई है ॥
आप ही विमुख ह्वै कै संशय मैं परै मूढ, कहैं गूढ कैसैं लखैं देत न दिखाई है।
ऐसी भ्रमबुद्धि कौ विकार तजि आप भजि, अविनासी रिद्धिसिद्धि दाता सुखदाई है ॥४६॥
देवन कौ देव ह्वै कैं काहे पर सेव करै, देव अविनासी तेरी देखि आप ध्यान मैं ।

जानै भवबाधा कौ विकार सो विलाय जाय, प्रगटै अखंड ज्योति आप निजज्ञान मैं ॥
तामें थिर थाय सुख आतम लखाय आप, मेटि पुन्य पाप बसैं जीय सिव थान में ।
शिवतिया भोग करि मासतौ सुथिर रहैं, देव अविनासी महापद निरवाण मैं ॥४७॥
देव अविनासी सुखरासी सो अनादि ही कौ, ज्ञान परकासी देख्यौ एक ज्ञानभाव तैं ।
अनुभौ अखंड भयो सहज आनंद लयो, कृतकृत्य भयो एक आतमा लखाव तैं ।
चिद्ज्योतिधारी अविकारी देव चिदानंद, भयो परमातमा सो निज दरसाव तैं ।
निरवाणनाथ जाकी संत सब सेवा करैं, ऐसौ निज देख्यौं निजभाव के प्रभाव तैं ॥४८॥
अतुल अबाधित अखंड देव चिदानंद, सदा सुखकंद महा गुणवृंद धारी है ।
स्वसंवेदज्ञान करि लीजिये लखाय ताहि, अनुभौ अनूपम ह्वै दोष दुखहारी हैं ॥
आप परिणाम ही तैं परम स्वपद भेंटि, लहिये अमल पद आप अविकारी हैं ।
सहज ही भावना तैं शिव सादि सिद्ध हूजे, यहैं काज कीजै महा यहै सीख मारी हैं ॥४९॥
सुद्ध चिद ज्योति दुति दीपति विराजमान, परम अखंड पद धरें अविनासी है ।

चिदानंद भूप की प्रदेशनमैं राजधानी, परम अनूप परमातमा विलासी है ॥
चेतन सरूप महा मुकति तिया कौ अंग, ताके संग सेती सोही सदा सुखरासी है ।
निहचै स्वपद देखि श्रीगुरु बतावतु हैं, अहो भवि जो तो निज आनंद उल्हासी हैं॥५०॥
गुण परजायन द्रवे तैं दरवि कह्यो, द्रव्य द्रयगुण परजायन कौं व्यापै हैं ।
द्रव्य परजाय द्रय दोउ मिले आप सुख, होय हैं अनंत ऐसैं केवली आलापै हैं ॥
अर्थक्रिया कारक ये द्रवे तैं सधि आवैं, द्रव्य ही गुण परजै कौं द्रव्यत्व ही थापै हैं ।
ऐसी है अनंत महा महिमा द्रवत्व ही, आतमा द्रवत्वकरि आपही मैं आपै हैं ॥५१॥
सामान्य विशेषरूप वस्तु ही मैं वसतुत्व, सोही द्रव्य लीयें सदा सामान्यविशेष हैं ।
सामान्य विशेष दोउ सब गुण मांहि सधै, परजाय मांहि यातैं सधत अशेष हैं ॥
द्रवै द्रव्यसामान्य जु भाव द्रवै या विशेष, सामान्यविशेष सो तो गुण को अलेष हैं ।
परजाय परणवै योही है सामान्य ताकौ, गुणन कौं परणवै योही जाकों शेष हैं ॥५२॥
सादृश्य स्वरूप सत्ता दोउ भेद सत्ताके, ताहू मैं स्वरूपसत्ता भेद बहु कहै हैं ।

द्रव्य गुण परजाय भेद तैं वखानी त्रिधा, गुण सत्ता भेद तौं अनंत भेद लहै हैं ॥
दरसन हैं दृग की ज्ञान हैं सुज्ञान सत्ता, ऐसै ही अनंत गुण सत्ता भेद चहै है ।
परजाय सत्ता सो तौ राखै परजाय कौं हैं, ऐसे सत्ताभेद लखि ज्ञानी सुख गहे हैं ॥५३॥
एक परमेय की प्रजाय सो अनंतधा है, तातैं सब गुण योग्य करवे प्रमाण हैं ।
परमेय बिना परमाण जोग्य नाहि हुते, यातैं परमेय सब गुण मैं प्रधान हैं ॥
याही परकार द्रव्य परजाय मांहि देखौ, याहीतैं विशेष महा योही बलवान हैं ।
याकी विधि जानैं सो प्रमाणैं आनंद कौं, सब परमाण करि पांव सुखथान हैं ॥५४॥
द्रव्य गुण परजाय जैसे ही के तैसे रहै, ऐसौ यो प्रभाव सो अगुरुलघु को कह्यौ ।
बिना ही अगुरुलघु हलके कै भारी हुते, यातैं नहीं जानौं मरजाद पद ना लह्यौ ॥
यातैं वस्तु जथावत राखवे कौं कारण है, ऐसौ यो अखंड लखि संपुरषा लह्यौ ।
याहीकै प्रसाद तीनौं जथावत याहीतैं, याही कौ प्रताप जगि जैवंतो बणि रह्यौ ॥५५॥
द्रव्य गुण परजाय स्वपद के राखवे कौं, वीरज के बिना नहीं सामरथ्य रूप हैं ।

वीरज ही सेती सब तीनौं पद नीके रहैं, यातैं बलवान वह वीरज स्वरूप है ॥
वीरज अधार यह अनाकुल आनंद हू, यातैं यह वीरज ही परम अनूप है ।
वीरज के भयें ये हू सब निहपन्न भये, यातैं यह वीरज ही सबनकौं भूप है ॥५६॥
एक परदेस मैं अनंत गुण राजतु हैं, ऐसे ही असंख्य परदेस धारी जीव हैं ।
दरव कौं सत्ता अरु आकृति प्रदेशनतैं, गुण परकाश है प्रदेश तैं सार्दीव है ॥
अर्थक्रियाकारक ये परणति ही तै ह्वै है, ऐसी परणति ही के परदेश सीव है ।
गुण परजाय जामैं करत निवास सदा, यातैं प्रदेशत्व गुण सबन कौ पीव है ॥५७॥
सबन कौं ज्ञाता ज्ञान लखत सरूप कौ है, दरशन देखि उपजावत आनन्द कौं ।
चारित चखैया चिदानन्द ही कौं वेदतु है, रसाम्वाद लेय पोषैं महासुख कन्द कौं ॥
अनुभौ अखंडरसवश पर्‌यौ आतमा यो, कहूं नहीं जाय दिढ राखैं गुणवृन्द कौं ।
रसिया सुर सरस रस के जे रसिया हैं, रस ही सौं भर्‌यौ देखैं देव चिदानंद कौं ॥५८॥
चक्षु अचक्षु गुण दरशन आतमा कौं, प्रत्यक्ष ही दीसै ताहि कैसै कै निवारिये ।

कुमति कुश्रुत ये हूं सारे जग जीवनकैं, ज्ञेय ज्ञान करै कहु कैसै ताहि हारिये।
इन्द्रिन की क्रिया ताकौ पेरक आतमा है, मन वच काय वरतावै यो विचारिये।
सबही कौ स्वामी अरु नामी जग माहि यो ही, मोक्ष जगि यो ही कहो ताहि कैसैं हारिये ॥५९॥
क्रोध मान माया लोभ चारौं कौ करैया यो, विषैरस भोगी यो ही भवकौ भरैया है।
यो ज्ञान कछु धारि अंतर सु आतमा ह्वै, यो ही परमातमा ह्वै शिवकौ वरैया है॥
योही गुणथान अरु मारगणा मांहि योही, शुभाशुभ शुद्धपयोग को धरैया है।
ज्ञानी औ अज्ञानी होय वरतै सो ही है, योही ऊँच नीच विधि सबकौ करैया है ॥६०॥
योही है असंजमी सुसंजम कौ धारी योही, योही अणुव्रत महाव्रत कौ धरैया है।
यो नट कला खेलै नाटक वणावै योही, योही बहुं सांग लाय सांग कौ करैया है॥
योही देव नारक जु तिरजंच मानव ह्वै, योही गति चारि मांहि चिरकौं फिरैया है।
योही साधि साधनकौं ज्ञान नाव बैठ करि, शुद्धभाव धारि भवसिंधुकौ तिरैया है॥६१॥
योही यो निगोद मैं अनंतकाल वसि आयो, योही भयो थावर सु त्रस योही भयौ है।

योही ज्ञान ध्यान मांहि योही कवि चातुरी मैं, चतुर ह्वै बैठौ अरु योही सठ थयो है॥
योही कला सीखि कै भयो महा कलाधारी, योही अविकारी अविकार जाकौ आयौ है।
योही निरफंद कहूं फंदकौ करैया योही, योही देव चिदानन्द ऐसैं परणयो है ॥६२॥

दोहा।

यह (इस) अनादि संसार मैं, थे अनादि के जीव।
पर पद ममता में फहे, उपज्यौ अहित सदीव ॥ ६३ ॥
ता कारण लखि गुरु कहैं, धरम वचन विसतार।
ताहि भविक जन सरदहैं, उतरैं भवदधि पार ॥६४॥
परम तत्व सरधा कियें, समकित ह्वै है सार।
सो ही मूल है धरम कौ, गहि भवि ह्वै भवपार ॥६५॥
देव धरम गुरु तत्व की, सरधा करि व्यवहार।
समकित यह शिव देतु है, परंपरा सुख धार ॥६६॥

सहज धारि शिव साधिये, यो सदगुरु उपदेस।
अविनासी पद पाइये, सकल मिटै भव क्लेस ॥६७॥
साधन मुक्ति सरूप कौं, नय प्रमाणमय जानि।
स्यादवाद कौं मूल यह, लखि साधकता आनि ॥६८॥
गुण अनन्त निज रूप के, शकति अनन्त अपार।
भेद लखै भवि मुक्ति सौं, शिवपद पावै सार ॥६९॥

सवैया, ३१

साधि निज नैगम तैं वर्तमान भाव करि, संग्रह स्वरूप तैं स्वरूप कौं गहीजिये।
गुणगुणीभेद व्यवहार तैं सरूप साधि, अलख अराधिकैं अखंड रस पीजिये॥
होय कैं सरल ऋजुसूत्र तैं स्वभाव लीजैं, अहं अस्मि शब्द साधि स्वसुख करीजिये।
अभिरूढ आपमैं अनूप पद आप कीजै, एवंभूत आप पद आपमैं लखीजिये ॥७०॥
स्वपद मनन करि मानिये स्वरूप आप, भाव श्रुत धारिकै स्वरूप कौं संभारिये।

अवधि स्वरूप लखै पाइये अवधिज्ञान, मनपरजैतैं मनज्ञान मांहि धारिये ॥
केवल अखंड ज्ञान लोकालोककै प्रमाण, सोही हैं स्वभाव निज निहचै विचारिये ।
प्रत्यक्ष परोक्ष परमानतैं स्वरूप कौं, सदा सुख साधि दुख द्वंद कौं निवारिये ॥७१॥
आप निज नामतैं अनेक पाप दूरि होत, सोहं की संभार शिव सार सुख देतु हैं ।
आकृति स्वरूप की सो थापना स्वरूप की है, ज्ञानी उर ध्याय निज आनंद कौ लेतु हैं ।
दरवि कैं देखैं दुख द्वंद सो विलाय जाय, याही कौ विचार भवसिंधु ताकौं सेतु है ॥
केवल अखंड ज्ञान भाव निज आपकौ है, लोकालोक भासिवे कौं निरमल खेतु है ॥७२॥
द्रव्य क्षेत्र काल भाव आपही कौं आपमैं जो, लखैं सोही ज्ञानी सुख पावत अपार है
संज्ञा अरु संख्या सही लक्षण प्रयोजनकौं, आपमैं लखावै वहै करैं सुउधार है ॥
आप ही प्रमाण प्रमेय भाव धारक हैं, आप षटकारकतैं जगत मैं सार है ।
आपही की महिमा अनंतधा अनंतरूप, आपही स्वरूप लखि लहैं भवपार है ॥७३॥
एक चिदमूरति स्वभाव ही कौं करता है, असंख्यात परदेशी गुणकौं निवासी है ।

जीव परणाम क्रिया करवें कौं कारण है, लोकालोक व्यापी ज्ञानभावकौं विकासी है ॥
आनसौं अतीत सदा सासतौ विराजतु है, देव चिदानंद जगि जोति प्रकासी है ।
ऐसौ निज आप जाकौं अनुभौ अखंड करै, शिवतियानाथ होय रहैं अविनासी है ॥७४॥
शोभित है जीव सदा आनसौं अतीत महा, आश्रव बंध पुण्य पाप सौं रहत हैं ।
सहज के संवर सौं परकौं निवारतु है, शुद्ध गुणधाम शिवभावसौं सहत हैं ॥
ऐसी अवलोकनिमैं लोकके शिखर परि, सासतौ विराजै होय जगमैं महतु हैं ।
शिवकैं सधैया जाकौं सुखराशि जानि जानि, अविनासी मानि मानि जै जय कहतु हैं ॥७५॥

दोहा

अचल अखंडित ज्ञानमय, आनंदघन गुणधाम । अनुभौ ताकौं कीजिये, शिवपद ह्वै अभिराम ॥७६॥

छंद

सहज परकास परदेश का वणि रह्या, देशही देश मैं गुण अनंता ।
सत अरु वस्तु बल अगुरु आदि दे, सकल गुण मांहि लखि भेद संता ॥

ज्ञान की जगनि में जोति की झलक है, ताहि लखि और तजि तंत मंता।
धारि निज ज्ञान अनुभौ करौं सासतौ, पाय पद सही ह्वै मुकति कंता ॥७७॥
सहज ही ज्ञान में ज्ञेय दरसाय हैं, वेदि हैं आप आनंद भारी।
लोक के सिखर परि सासते राजि हैं, सिद्ध भगवान आनंदकारी ॥
अमित अदभुत अति अमल गुणकौं लियें, शुद्ध निज आप सब करम टारी।
देह मैं देव परमातमा सिद्धसौं, तास अनुभौं करौं दुखहारी ॥७८॥
सहज आनंद का कंद निज आप है, ताप भव रहत पद आप वेवैं।
आपके भाव का आप करता सही, आप चिद करम कौं आप सेवैं ॥
आप परिणाम करि आपकौं साधि हैं, आप आनंदकौं आप लेवैं।
आपतैं आपकौं आप थिर थापि हैं, आप अधिकार की धारि टेवै
(आप महिमा महा आपकी आप मैं, आपही आपकौं आप देवै) ॥७९॥
आप अधिकार जानि सार सरवगि कहैं, ध्यान मैं धारि मुनिराज ध्यावैं।

सकति परिपूरि दुख दूरि हैं जासतैं सहज के भाव आनंद पावैं ॥
अतुल निज बोध की धारिकें धारणा, सहज चिद्‌जोति मैं लै लगावैं ।
और करतूति का खेदको नां करै, आपकै सहज घरि आप आवैं ॥८०॥
सकल संसार का रूप दुख भार हैं, ताहि तजि आपका रूप दरसैं ।
मोह की गहलितैं परकौं निज कह्या, त्यागि पर सहज आनंद बरसैं ॥
आपका भाव दरसावकरि आपमैं, जोतिकौं जानि भव्य परम हरसैं ।
शुद्ध चिदरूप अनुभौ करै सासतौ, परम पद पाय शिवथान परसैं ॥८१॥
सकल संसार परमांहि आपा धरै, आप परिणामकौं नाहि धारैं ।
सहज का भाव हैं खेद जामैं नहीं, आप आनंदकौं ना संभारैं ॥
कहै गुरु बैन जो चैन की चाहि हैं, राग अरु दोषकौं क्यों न टारैं ।
त्यागि पर थान अमलान आपा गहैं, ज्ञानपद पाय शिवमैं सिधारै ॥८२॥
मूंठि कपि की कहौ कौन नै पकरी, पाडलीकौं जल कौन पीवैं ।

कांच के महल मैं श्वान कहा दूसरौ, कूप मैं सिंह गरजै नहीं वै ॥
जेवरी मैं कहूं नाग नहीं दरसि हैं, नलिनि सूवा न पकरयो कहीं वै ।
भूलिके भाव कौं तुरत जो मेटि दे, पावकैं अमर पद सदा जीवैं ॥८३॥
गमन की बात यह दूरि ह्वै तौ कहूं, दुख ह्वै तौ कहूं सुखी थावौ ।
खेद ह्वै तौ कहूं नैक विश्राम ल्यौ, अलाभ ह्वै तौं कहूं लाभ पावौं ॥
बंध ह्वै तौ कहूं मुकतिकौ पद लहौ, आप मैं कौन है द्वैत दावौ ।
सहज कौं भाव वो सदा जो वणि रह्यौं, ताहि लखि और को मति उपावौ ॥८४॥
देव चिदरूप अनूप अनादि है, देशना गुरु कहैं जानि प्यारे ।
अतुल आनंदमैं ज्ञान पद आप है, ताप भवकौं नहीं है लगारे ॥
आप आनंदके कंदकौं भूलिकै, भमत जगमांहि यह जंतु सारे ।
आपकी लखनि करि आपही देखि हैं, आप परमातमा नाजूवारे ॥८५॥
अलख सबही कहैं लख न कोई कहै, आप निज ज्ञानतैं संत पावैं ।

जहां मत नहीं तंत मुद्रा नहीं भासि हैं, धारणा की कहीं कौं चलावैं ॥
वेद अरु भेद पर खेद कोऊ नहीं, सहज आनंदही कौं लखावै ।
आप अनुभौ सुधा आपही पीय कैं, आपकौं आप लहि अमर थावै ॥८६॥

सवैया, ३१

यौंही करै करमकौं योही धरै धरमकौं, योही मिश्रभाव नौ जु करता कहायो है ।
योही शुभलेश्या धरि सुरग पधार्‍यो आप, योही महापाप बांधि नरकि सिधायो है ॥
योही कहूं पातरि नाचत ह्वै नेक फिर्‍यो, योही जसधारी ढोल जसई बजायो है ।
याही परकार जग जीव यो करत काम, औसर मैं साधौं शिव श्री गुरु बतायो है ॥८७॥

अडिल्ल ।

तुम देवन के देव कही भव दुख भरौं । सहजभाव उर आनि राज शिवकौं करौं ॥
जहां महाथिर होय परम सुख कीजिये । चिदानंद आनंद पाय चिर जीजिये ॥८८॥
पर परणतिकौं धारि विपति भवकी भरी । सहजभावकौं धारि शुद्धता ना करी ॥

अब करिकैं निजभाव अमर आपा करौ। अविनासी आनंद परम सुखकौं करौ ॥८९॥
सकल जगतके नाथ सेव क्यौं पर करौं। अमल आप पद पाय ताप भव परिहरौं ॥
अतुल अनूपम अलख अखंडित जानिये। परमातम पद देखि परम सुख मानिये ॥९०॥
सही जानि सुखकंद द्वंद दुख हारिये। चिनमय चेतन रूप आप उर धारिये ॥
पर परणतिकौ प्रेम अबै तज दीजिये। परम अनाकुल सदा सहज रस पीजिये ॥९१॥

छप्पय

सहज आप उर आनि अमल पद अनुभव कीजे। ज्योति स्वरूप अनूप परम लहि निजरस पीजे॥
अतुल अखंडित अचल अमितपद है अविनासी। अलख एक आनंद कंद है नित सुखरासी ॥
सोही लखाय थिर थाय कैं उल्हसि उल्हसि आनंद करैं।
कहि दीपचंद गुणवृंद लहि शिवतिया के सुख सो वरैं ॥ ६२ ॥

दोहा

ग्रंथ स्वरूपानंद कौं, लीजै अरथ विचारि। सरधा करि शिवपद लहैं, भवदुख दूरि निवारि ॥९३॥

संवत सतरा सौ सही, अरु इकानवै जानि। महा मास; सुदि पंचमी, कियो सु सुखकी खानि ॥१४॥

देव परम गुरु उर धरौ, देल स्वरूपानंद। 'दीप' परम पद कौं लहै, महा सहज सुख कंद ॥१५॥

इति

उपदेश सिद्धान्त रत्न

दोहा

परम पुरुष परमातमा, गुण अनंतके थान। चिदानंद आनंदमय, नमौं देव भगवान ॥१॥
अनुपम आतम पद लख, धरै महा निज ज्ञान। परम पुरुष पद पाइ हैं, अजर अमर लहि थान ॥२॥
विविध भाव धरि करमके, नाटत है जगजीव। भेद ज्ञान धरि संतजन, सुखिया हौंहि सदीव ॥३॥

सवैया

करमके उदै केउ देव परजाय पावैं, भोग के विलास जहां करत अनूप हैं।
महा पुण्य उदै केउ नर परजाय लहैं, अति परधान बडे होइ जग भूप है ॥
केउ गति हीन पाय दुखी भये डोलत हैं, राग दोष धारि परैं भव कूप हैं।
पुण्यपाप भाव यहैं हेय करि जानत हैं, तेई ज्ञानवंत जीव पावैं निजरूप हैं ॥४॥

दोहा

अतुल अविद्या वसि परे, धरैं न आतमज्ञान । पर परणतिमैं पगि रहै कैसैं ह्वै निरवान ॥५॥

सवैया

मानि पर आपो प्रेम करत शरीर सेती, कामिनी कनक मांहि करै मोह भावना ।
लोक लाज लागि मूढ आपजै अकाज करै, जानै नही जे जे दुख परगति पावनां ॥
परिवार प्यार करि बांधै भवभार महा, विनुही विवेक करै काल का गमावनां ।
कहै गुरु ग्यान नांव बैठि भवसिंधु तरि, शिवथान पाय सदा अचल रहावना ॥६॥
करम अनेक बांधै चरमशरीर काजि, धरम अनूप सुखदाई नाहि करै हैं ।
मोह की मरोरतैं न स्वपर विचार पावै, धंधही मै ध्यावै यातैं भव दुख भरै है ॥
आपकौं प्रताप जाकौ करै नही परकाज, सोई तो निगोदमांहि कैसें अनुसरै हैं ।
कहै दीपचंद गुणवृंदधारी चिदानंद, आप पद जानि अविनासी पद धरै है ॥७॥
मेरो देह मेरो गेह मेरो परिवार यह मेरो भेरो मानै जाकी माननि धरतु हैं ।

जगमें अनेक भाव जिनकौ जनैया होत, परम अनूप आप जानिन करतु है ॥
मोहकी अलट तै अज्ञान भयो डोलतु है, चेतना प्रकाश निज जान्यौ न परतु है ।
अहंकार आनकौ कीये तै कछु सिद्धि नाहि, आप अहंकार कीये कारिज सरतु है ॥८॥
सहज संभारि कहा परिमांहि फंसि रह्यौ, जेजे परमानै तेते सब दुखदाई हैं ।
विनासीक जड़ महा मलिन अतीव बनैं, तिनही की रीति तोकौं अतिही सुहाई हैं ॥
समझि के देखि सुखदाई भाव भूलतु है, दुखदाई मानैं कहु होत न बड़ाई है ।
अरुभयौं अनादिको हैं अजहूं न आवै लाज, काज सुध कीये विनु कोई न सहाई हैं ॥९॥
लैकिक के काजि महा लाखन खरच करै, उद्यम अनेक धरै अगनि लगाय कैं ।
महासुख दायक विधायक परमपद, ऐसौ निजधरम न देखै दरसाय कैं ।
एकबार कह्यौ तू हजार बार मेरी मानि, देह कौ सनेह कीये रुलै दुख पाय कैं ॥
आतमीक हित यातैं करणौ तुरत तौकौं, और परपंच झूठे करै क्यौं उपाय कै ॥१०॥
तन धन मन ज्ञान च्यार्यौ क्यौं छिनाय लेत, तासौं धरै हेत कहैं मेरी अति प्यारी है ।

आभूषण आदि वस्तु बहु तै मंगाय देत, विषैसुख हेतु ही तै हिये मांहि धारी है ॥
महा मोह फंद ताकौ मंद करै चंदमुखी, ताकौ दासातन मूढ करै अति भारी है।
आपदा दुवार जाकौ सार जानि जानि रमै, भवदुखकारी ताहि कहै मेरी नारी है ॥११॥
पर परिणति सेती प्रेम दे अनादि ही कौ, रमै महामूढ यह अति रति मानि कैं।
कुमति सखी है जाकी ताकौ फस लियौ डोलै, गति २ मांहि महा आप पद जानि कै ॥
सहज के पाये बिनु राग दोष ऐंचतु है, पावै न स्वभाव यौं अज्ञान भाव ठानि कै।
कहै दीपचंद चिदानंदराजा सुखी होई, निज परिणति तिया घर बैठे आनि कैं ॥ १२ ॥
चिदपरणाति नारी हैं अनंत सुखकारी, ताही कौ बिसारी तातै भयो भववासी है।
जाकौ धारि आनि तातैं आप कै संभारै निधि, आतमीक आप केरी महा अविनासी है।
भोगवैं अखंड सुख सदा शिवथान मांहि, महिमा अपार निज आनंद विलासी है।
कहैं दीपचंद सुखकंद ऐसैं सुखी होय, और न उपाय कोटि रहै जो उदासी है है ॥१३

दोहा

सकल ग्रंथ कौ मूल यह, अनुभव करिये आप। आतम आनंद ऊपजे, मिटे महा भव ताप ॥१४॥

सवैया

करि करतूति केउ करम की चेतना मैं, व्यापकता धारि ह्वै हैं करता करम के।
शुभ वा अशुभ जाको आप कैं सुफल होत, सुख दुख मानि; भेद लहैं न धरम कें ॥
ज्ञान शुद्ध चेतना मैं करम करम फल, दोऊ नहीं दीसै भात्र निज ही शरम कें।
कहैं दीपचंद ऐसे भेद जानि चेतना के, चेतना कौ जानैं पद पावत परम के ॥ १५ ॥
वेद के पढे तैं कहा स्मृति हू पढैं कहा, पुराण पढे तें कहा निज तत्व पायौ है।
बहु ग्रंथ पढ़े कहा जानैं न स्वरूप जो तो, बहोत क्रिया के किये देवलोक थावे हैं ॥
तप के तपे हूं ताप होत हैं शरीर ही कौं, चेतना निधान कहूं हाथ नहीं आवे है।
कहै दीपचंद सुखकंद परवेम किये, अमर अखंड रूप आतमा कहावे हैं ॥१६॥
वेद निरवेद अरु पढे हूं अपढ महा, ग्रंथन कौं अरथ सो हू वृथा सब जानिये।

भले भले काज जग करिवो अकाज जानि, कथा कौं कथन सोहू विकथा बखानिये।
तीरथ करत बहु भेष कौं वणाये कहा, बरत विधान कहा क्रियाकांड ठानिये।
चिदानंद देव जाकौं अनुभौ न होय जोलौं, तोलौं सब कर्यौ अकरवो ही मानिये ॥१७॥
सुरतरु चिंतामणि कामधेनु पाये कहा, नौविधान पायें कछु तृष्णा न मिटावै है।
सुरहू की संपतिमैं बैठ भोग भावना है, राग के बढावना मैं थिरता न पावै है ॥
करम के कारिज मैं कृतकृत्य कैसै होय, यातें निजमांहि ज्ञानी मनकौं लगावै है।
पूज्य धन्य उत्तम परमपद धारी सोही, चिदानंद देव कौ अनंतसुख पावै है ॥१८॥
महाभेष धारिकैं अलेख कौं न पावे भेद, तप ताप तपै न प्रताप आप लहै हैं।
आनही की आरति हैं ध्यान न स्वरूप धरैं, परही की मानि मैं न जानि निज गहै हैं॥
धन ही कौं ध्यावै न लखावै चिद लिखमी कौं, भाव न विराग एक राग ही मैं फहै है।
ऐसै है अनादि के अज्ञानी जगमाहि जोतो, निज ओर ह्वै तौ अविनासी होय रहै है ॥१९॥
परपद धारणा निरंतर लगी ही रहैं, आपपद केरी नाहि करत संभार है।

देहकौ सनेह धारि चाहै धन कामनी कौं, राग दोष भाव करि बांधे भवभार है ॥
इंद्रिन के भोग सेती मन मैं उमाह धरैं, अहंकार भाव तैं न पावै भवपार हैं ।
ऐसौ तौ अनादि कौं अज्ञानी जग मांहि डोलैं, आप पद जानै सो तो लहै शिवसार हैं ॥२०॥
करम करोलन की उठत झकोर भारी, यातैं अविकारी को न करत उपाव है ।
कहुं क्रोध करै कहुं महा अभिमान धरै, कहुं माया पगि लग्यो लोभ दरयाव हैं ॥
कहुं कामवशि चाहि करैं अति कामनी की, कहुं मोह धारणा तै होत मिथ्या भाव है ।
ऐसै तो अनादि लीनो स्वपर पिछांनि अब, सहज समाधि में स्वरूप दरसाव है ॥२१॥
नौनिधान आदि देकैं चौदहै रतन त्यागे, छिनवैं हजार नारि छांडि दीनी छिनमैं ।
छहों खण्ड की विभूति त्यागि कैं विराग लियो, ममता नहीं (है) मुलि (भूलि) कहूं एक तिन मैं ॥
विश्वकौं चारित्र विनासीक लख्यौ मन मांहि, अविनाशी आप जान्यौं जग्यौ ज्ञान तिनमैं ।
याही जगमांहि ऐसैं चक्रवर्ती है अनन्ते, विभौ तजि काज कियो तू वराक किनमैं ॥२२॥
कनक तुरंग गज चामर अनेक रथ, मंदर अनूप महारूपवन्त नारी है ।

सिंहासन आभूषण देव आप सेवा करें, दीसैं जगमांहि जाकौं पुण्य अति भारी है ॥
ऐसौ है समाज राज विनासीक जानि तज्यौ, साध्यौ शिव आप पद पायो अविकारी है ।
अब तू विचारि निज निधि कौं संभारि सही, एक बार कह्यौ सो ही यो हजारवारी है ॥२३॥
विविध अनेक भेद लिये महा भासतु हैं पुद्गलदरब गति तामैं नाहि कीजिए ।
चेतना चमतकार समैसार रूप आप, चिदानन्द देव जामैं सदा थिर ह्वीजिए ॥
पायो यह दाव अब कीजिए लखाव आप, लहिए अनन्त सुख सुधारस पीजिए ।
दरसन ज्ञान आदि गुण है अनंत जाके, ऐसो परमातमा स्वभाव गहि लीजिये ॥२४॥
राजकथा विषैभोग की रति कनकनग केउ धनधान पशु पालन करतु है ।
केउ अन्य सेवा मंत्र औषध अनेक विधि, केउ सुर नर मनरंजना धरतु है ।
केउ घर चिंता मैं न चिंता क्षण एक मांहि, ऐसैं समैं जाहि तेई भौदुख भरतु हैं ।
जग मैं बहुत ऐसे पावत स्वरूप कौं जे, तेई जन केउ शिवतिया कौं वरतु हैं ॥२५॥
करम संजोग सेती धरि कैं विभाव नाट्यौ, परजाय धरि धरि परही मैं पर्यो है ।

अहं ममकार करि भव भाव बांध्यौ अति, राग दोष भावन मैं दौरि दौरि लग्यो है ॥
ज्ञानमई सार सो विकार रूप भयो यह, विषय ठगोरी डारि महामोह ठग्यो है।
ताजि कैं उपाधि अब सहज समाधि धारि, हियेमैं अनूप जो स्वरूप ज्ञान जग्यो है ॥२६॥
गति गति मांहि पर आप मानि राग धरै, और पुण्य पाप ठानि भयो भववासी है।
चेतना निधान अमलान है अखंड रूप, परम अनूप न पिछानैं अविनासी है ॥
ऐसी परभावना तू करत अनादि आयो, अब आप पद जानि महासुखरासी है।
देवनकौ देव तू ही आन सेव कहा करै, नैक निज ओर देखै सुखकौ विलासी है ॥२७॥
अहं नर अहं देव अहं धरै परटेव, अहं अभिमान यो अनादि धारि आयो है।
अहंकार भावतैं न आपकौ लखाव कियो, परहीमैं आपो मानि महादुख पायो है ॥
कहुं भोग कहु रोग कहुं सोग हैं वियोग, राग दोष मई उपयोग अपनायो है।
। अनंतगुणधारी अब आतमाकौ, अनुभौ अखंड करि श्रीगुरु दिखायौ है ॥२८॥
करिकैं विभाव भवभांवरि अनेक दीनी, आनंदकौ सिंधु चिदानंद नहीं जान्यौ है।

करम कलंक पंक कोउ नहीं जहां कहे, सदा अविनासीकौ लखाव नहीं आन्यौ है ॥
गुणनकौ धाम अभिराम है अनूप महा, ऐसों पद त्यागि परभाव उर ठान्यौ है ।
भूलितैं अनादि दुख पाये सो तो निवरी है, सहज संभारि अब श्रीगुरु बखान्यौ है ॥२९॥
आतम करम संधि सूक्षम अनादि मिली, जामैं अति पैनी बुद्धि छैनी महाभारी है ।
शुद्ध चिदज्योति मैं स्वरूप कौ सथाप्यौ यातैं, स्वपर की दशा सब लखी न्यारी न्यारी है ।
ज्ञायक प्रभा मैं निज चेतना प्रभुत्व जान्यौ, अविनासी आनंद अनूप अविकारी है ।
कृतकृत्य जहां कछु फेरि नहीं करणौ है, सासती पदी म निधि आपकी संभारी है ॥३०॥
करी तैं अनादि क्रिया पायो न स्वरूप भेद, परभाव मांहि न ह्वै सहज की धारणा ।
आपकौ स्वभाव वर्ण्यौ महा शुद्ध चेतना मैं, केवल स्वरूप लखि करिकैं संभारणा ॥
सुपददशा के लखैं सुगम स्वरूप आप, ऐसा तौ भला देखि समझि विचारणां ।
आनंदस्वरूप ही मैं पर ओर कहा देखै, आप ओर आप देखि होय ज्यौं उधारणां ॥३१॥
तू ही चिनमूरति अनूप आप चिदानंद, तूही सुखकंद कहा करै पर भावना ।

तेरे हा स्वरूप मैं अनंतगुण राजतु हैं, जिनकौ संभारि बढै तेरी ही प्रभावना॥
तूही पर भावन मैं राचि कैं अनादि दुखी, भयो जगि डोलै संकलेश जहां पावना।
नैक निज ओर देखे शिवपुरीराज पावै, आनंद मैं वेदि वेदि सासता ग्हावना॥३२॥
सहज बिसाऱ्यो तैं संभाऱ्यौ परपद यातैं, पायो जगजाल मैं अनंत दुख भारी है॥
आजु सुखदायक स्वरूप को न भेद पायो, अति ही अज्ञानी लागै परतीति प्यारी है॥
परम अखंड पद करि तू संभार जाकी, तेरो है सही सौं सदा पद अविकारी है।
कहैं दीपचंद गुणवृंदधारी चिदानंद, सोही सुखकंद लखैं शिव अधिकारी है॥ ३३॥

दोहा

विविध रीति विपरीति हैं, याही समै के माही। धरम रीति विपरीत कूं, मूरख जानत नाहि॥३४॥

सवैया

केऊ तौ कुदेव मानै देवकौ न भेद जानै, केउ शठ कुगुरु कौ गुरु मानि सेवै है।
हिंसा मैं धरम केऊ मूढ जन मानतु है, धरम की रीति विधि मूल नहीं बैठे है।

केउ राति पूजा करि प्राणिनिकों नाश करैं, अतुल असंख्य पाप दया बिनु लेवै है ॥
केउ मूढ लागि मूढ़ अबै ही न जिन बिंब, सेवै बार बार लागे पक्ष करि केवै हैं ॥३५॥
सुत परिवार सौं सनेह ठानि वार बार, खरचै हजार मनि धरि कैं उमाह सौं।
धरम के हेत नैंक खरच जो वणि आवै, सकुचै विशेष, धन खोय याही राहसौं ॥
जाय जिन मांदिर मैं बाजरौ चढावै मूढ, आप घर मांहि जीवै चावल सराहसौं।
देखो विपरीत याही समैं मांहि ऐमी रीति, चोरही को साह कहै कहैं चोर साहसों ॥३६॥
गुणथान तेरह मैं केवल प्रकाश भयो, तहां इन्द्र पूजा करैं आप भगवान की।
तीसरै थड़े पैं खडो दूरि भगवानजी सौ, चढावै दरव वसु; कला वाह्यज्ञान की ॥
धरमसंग्रहजी मैं कह्यो उपदेश यहै, तातैं जिनप्रतिभा भी जिनही समानकी।
यातैं जिन बिम्ब पाय लेप न लाइयतु, लेप जु लगायै ताकी बुद्धि है अज्ञान की ॥३७॥

दोहा

वीतराग परकरण मैं, सभी सराग न होइ। जैसो करि जहां मानिये, तैसी विधि अवलोइ ॥३८॥

सवैया

साधरमी निरधन देखि कें चुरावे मन, धरम कौं हेत कछु हिये नहीं आवे है।
सुत परिवार तिया इनमें लग्यो है जिया, इनही के काज मूढ़ लाखन लगावै है॥
नरक को बंध करै हिये मे हरख धरै, जनम सकल मानि मानि कें उम्हावै है।
नैंक हित किये भवसागर कौ पार होत, धरम को हित ऐसो श्रीगुरु बतावै है॥३६॥

दोहा

क्रौडौं खरचै पाप कौं, कौडी धरम न लाय। सो पापी पग नरक कौं, आगे २ जाय॥४०॥
मान बडाई कारणैं, खरचै लाख हजार। धरम अरथि कोडी गयें, रोवत करै पुकार॥४१॥
करम करत हैं पाप के, बार बार मन लाय। धरम सनेही मित्र की, नैक न करै सहाय॥४२॥
कनक कामिनी सौं करैं जैसौं हित अधिकाइ। तैसो हित नहि धरम सौं यातैं दुरगति थाइ॥४३॥

सवैया

एक सुत ब्याह काजि लावत हजारों धन, कहे हम धन्य आजि शुभ घरी पाई है।

समरथ भयेतें सब धन कों छिनाय लेत, कुगति कों हेतु यासौं कहे सुखदाई है ॥
देशना धरम की दे दोउ लोक हित ठानैं, तिनकौ न माने मूढ लगी अधिकाई है ।
माया भिखारी महा कर्महीं कौ अधिकारी, करै न धरम बूझि भौथिति बढाई है ॥ ४४॥
कामिनी कौं कनक के आभूषन करि करि, करें महा राजी जाकै विषैं मति लागी है ।
रहसि जिनेन्द्रजी के धरम को जानें नाहि, मानहीं बड़ाई काजि लछमी को त्यागी है ।
विधि न धरम जानें गुण कौ न मानें मूढ, आज्ञा भंग क्रिया जासौं प्रीति अति पागी है ।
आतमीक रुचि करें मारग प्रभाव तासौं, करै न सनेह शठ बडो ही अभागी है ॥४५॥
गुणकौ ग्रहण किये गुण बढवारी होई, गुणबिन मानैं गुणहानि ही बखानिये ।
गुणी जन होइ सोतो गुणकौं ही चाहतु हैं, दुष्ट चाहैं औगुणकौं ताकौं धिक भानिये ॥
स्तन मैं क्षीर तजि पीवत रुधिर जोंक, ऐसौ है स्वभाव जाको कैसैं भलो जानिये ।
यातैं गुणग्राही होइ तजि दीजे दुष्ट वाणि, गुणकौ ही मानि मानि धरमकौ ठानिये ॥४६॥
धरम की देशना तैं गुण देइ सज्जन कौ, दीनन कौ धन मन धरम मैं लावै हैं ।

चेतन की चरचा चित म सुहावै जाकौं, मारग प्रभाव जिनराजजी को भावै है ॥
अति ही उदार उर अध्यातम भावना है, स्यादवाद भेद लिए ग्रंथ कौं वणावै है ।
ऐसौ गुणवान देखि सजन हरष धरैं, दुर्जन कै हिये हित नैक हू न आवै है ॥४७॥
धन ही कौ सार जानि गुणकी निमानि करैं, मोह सेती मान धरैं चाह है वडाइ की ।
नारी सुत काजि झूठ खरचि हजारौं डारैं, चाकरी न करैं कहुं धरम कै भाई की ॥
साधरमी धनहीन देखि कैं करावै सेवा, अनादर राखैं रति नहीं अधिकाई की ।
माया की मरोरतैं न धरम कौं भेद पावैं, बिना विधि जानैं रीति मिटै कैसैं काई की ॥४८॥
साता सुखकारी यहै मोह की कुटिल नारी, ताकौं जानि प्यारी ताके मदकौं करतु है ।
धरम भुलावैं अति करम लगावै भारी, ऐसी साता हेत लच्छी घर मैं धरतु हैं ॥
यह लोक चिंता परलोक मैं कुगति करैं, कहै मेरौ यासैं सब कारज सरतु हैं ।
धरम के हेत लाइ धनकी सुगति करैं, धरम बढावैं शिवतिय के चरतु है ॥४९॥
बार बार कहैं कहा तू ही या विचारि बात, लछमी जगतमैं न थिर कहुं रही है ।

जाकौं करि मद अर फेरि क्यौं करम बांधै, धरम के हेत लाये सुखदाई कही है ॥
ऐसी दुखदायनिकौं कीजिये सहाय निज, यातैं और लाभ कहा ढूंढि देखि मही है ॥
साधर्मी दुख मेटि धरम के मग लाय, सात खेत वाहें सुख पावैं जीव सही है ॥५०॥
दस प्राण हू तैं प्यारो धन है जगत मांहि, महा हित होइ जहां धनकौं लगावै है ।
तियाकौं तौ धन सौंपै सुतकौं सब घर, धरममैं लालि पालि नेक हू न भावै है ॥
लौकिक बडाई काजि खरचै हजारों धन, चाह है बडाई की न धरम सुहावै है ।
मूढन कौं मूढ महारूढ ही मैं विधि जानैं, सांच न पिछानैं कहौ कैसैं सुख पावै है ॥५१॥
माया की मरोर ही तैं टेढो टेढो पांव धरै, गरबकौं धारि नहीं नरमी गहतु है ।
विनै को न भेद जानैं विधना पिछानैं मूढ, अरुझ्यौ बडाई मैं न धरम लहतु है ॥
चेतना निधान कौं विधान जिन रीती, पावैं तिनहूं सौं ईरष्या अज्ञानी यौं महतु है ।
रोजगारी करकैं समीप राख्यौ चाहै आप, याहू तैं अधिक बडो पाप कौ कहतु है ॥५२॥
गुणवंत देखि अति उठि ठाडो होइ आप, सनमुख जाय सिंहासन परि धौरै हैं ।

सेवा अति करै अरु दास तन धरै महा विनैरूप बैन भक्तिभाव कौ बढौर हैं ॥
प्रभुता जनावै जगि महिमा बढावै जाकी, चाहिजि मैं असे अंग सेवा कौं संभारे हैं ।
भक्ति अंग ऐसौ कोउ करै पुण्यकारणि, जो पुण्य काउपावैं अरु दुख दोष टारै हैं । ५३
प्रीति परिपूरण तै रोम रोम हरषित ह्वै, चित चाहै बार २ येम रस भर्यौ है ।
अंतर मैं लगनि अतीव धरै धारणा सो महा अनुराग भाव ताही मांहि धर्यौ है ॥
जहां जहां जाकौ संग तहां २ ताको रंग, एक रस रीति विपरीति भाव हर्यौ है ।
ऐसौ बहु मान अंग विनैका बखान्यौ सुध ज्ञानवान जीव हित जानि यह कर्यौ है ॥५४॥
गुणकौं बखानि जाकैं जस कौ बढावै महा, जाकी गुण महिमा दिढावै बार २ है ।
जाही कौ करत अति गुणवान ज्ञानवान, कथन विशेष जाको करै विसतार है ।
रहि क निसंक नाही बंक हू नमन मांहि, करत अतीव थुति हरष अपार है ।
गुणन कौ वरणन न तीजो अंग विनै को, जाकौ किये बुध पुण्य लहै जगसार है ॥
अवज्ञा वचन जाकौ कहूं न कहत भूलि, निंदा बार बार गोप्य, गुणकौ गहिया है ।

धरम कौ जस जाकौ परम सुहावत है, धरम को हित हेतु हिये मैं चहिया है॥
कियैं अवहेल तातैं लगत अनेक पाप, ऐसौ उर जानि जाके दोष को दहिया है।
आपनी सकति जहां निंदा सब मेटि डारै, ऐसा विनैभाव जात पुण्यकौं लहिया हैं ॥५६॥
जाके उपदेश सेती धरम कौं लाभ होय, सोही परमातमा यो ग्रंथन मैं गायो है।
आप अधिकार मांहि ताकौं दुखभार होय, अधिकार ऐसौ बुधिवंत नै न भायो है॥
आपके प्रभुत्व मैं न साधरमी सार करै, आछादन लगैं मूढ निंद्य ही कहायो हैं।
देकैं धन संपदा कौं आपके समान करैं, साधरमी हासि मेटि पुण्य जे उपायो हैं॥५७॥
अरहन्त सिद्ध श्रुत समकित साधु महा, आचारज उपाध्याय जिनबिंब सार है।
धरम जिनेश जाकौ धन्य है जगत मांहि, च्यारि परकार संघ सुध अविकार है॥
पूजि इन दशन कौं पंच परकार विनै, कीजिए सदैव जातैं लहै भव पार है।
धरमकौ मूल यह ठौर ठौर विनै गायौ, विनैवंत जीव जाकी महिमा अपार है ॥५८॥
नाम नौका चढिकै अनेक भव पार गये, महिमा अनन्त जिननाम की बखानी है।

अधम अपार भवपार लहि शिव पायो, अमर निवास पाय भये निज ज्ञानी है ॥
नाम अविनाशी सिद्धि रिद्धि वृद्धि करै महा, नाम कै लिये तैं तिरैं तुरत हा प्राणी हैं ।
नाम अविकार पद दाता है जगत माहि, नाम की प्रभुता एक भगवान जानी है ॥५९॥
महिमा हजार दस सामान्य जु केवली की, ताके सम तीर्थंकरदेवजी की मानिये ।
तीर्थंकरदेव मिलै दसक हजार ऐमी, महिमा महत एक प्रतिमा की जानिये ॥
सो तो पुण्य होय तब विधि सौं विवेक लिये, प्रतिमा कै ढिग जाय सेवा जब ठानिये ।
नाम के प्रताप सेती तुरत तिरे हैं भव्य, नाम महिमा विनतैं अधिक बखानिये ॥६०॥
करमैं जपाली धरि जाप करै बार २, धन ही मैं मन यातैं काज नहीं सरै है ।
जहां प्रीति होय याकी सोई काज रसि पडैं, विना परतीति यह भवदुख भरै है ॥
तातैं नाम माहिं रुचि धर परतीति सेती, सरधा अनायें तेरो सवै दुख टरै है ।
नाम के प्रताप ही तैं पाइये परम पद, नाम जिनराज कौं जिनेश ही सौं करै हैं ॥६१॥
नाम ही कौ ध्यान मैं अनेक मुनि ध्यावत हैं, नाम तैं करमफंद छिनमैं विलाय हैं ।

नाम ही जिहाज भवसागर के तिरको कौं, नामतै अनंतसुख आतमीक धाय है ॥
नाम के लिये तैं हिये राग दोष रहै नाहि, नामके लिये तैं होय तिहुं लोकराय हैं ।
नाम के लिये तैं सुरराज आय सेवा करै, सदा भवमांहि एक नाम ही सहाय है ॥६२॥
धन्य पुण्यवान हैं अनाकुल सदैव सोही, दुखकौ हरैया सोही सदा सुखरासी है ।
सोही ज्ञानवान भव-सिंधुकौ तिरैया जानि, सोही अमलान पद लहै अविनासी है ।
ताके तुल्य और की न महिमा बखानियतु, सोही जगमांहि सब तत्वकौ प्रकासी है ॥
प्रभुनाम हिये निशिदिन ही रहत जाकै, सोही शिव पाय नही होय भववासी है ॥६३॥
त्रिभुवननाथ तेरी महिमा अपार महा, अधम उधारे बहु तारे एक छिन मैं ।
तेरो नाम लियेतैं अनेक दुख दूर होत, जैसे अधिकार विलै जाय सही दिन मैं ॥
तू ही है अनंतगुण रिद्धिकौ दिवैया देव, तू ही सुखदायक हैं प्रभु खिन २ मैं ।
तू ही चिदानंद परमातमा अखंडरूप, सेयें पाप जरै जैसे इंधन अगनि मैं ॥६४॥
देव जगतारक जिनेश हैं जगत मांहि, अधम उधारण कौ विरद अनूप हैं ।

सेयें सुरराज राज हू से आय पाय परैं, हरै दुख द्वंद प्रभु तिहुंलोक भूप हैं ॥
जाकी थुति कियेंतैं अनंतसुख पाइयतु, वेद मैं बखान्यौ जाको चिदानंद रूप है ।
अतिशय अनेक लियें महिमा अनंत जाकी, सहज अखंड एक ज्ञान का स्वरूप है ॥६५॥
नाम निसतारौ महा करि है छिनक मांहि, अविनाशी रिद्धि सिद्धि नाम ही तैं पाइये ।
तिहुंलोक नाथ एक नाम के लियेतैं ह्वै है, नाम परसाद शिवथान मैं सिधाइये ॥
नाम के लिये तैं सुरराज आय सेवा करै, नाम के लिये तै जगि अमर कहाइये ।
नाम भगवानकै समान आन कोउ नाहिं, यातैं भवतारी नाम सदा उर भाइये ॥६६॥
आतमा अमर एक नाम के लिये तैं होय, चेतना अनंत चिन्ह नाम ही तैं पावै हैं ।
नाम अविकार तिहुंलोक मैं उधार करै, परम अनूपपद नाम दरसावै है ॥
आनंदकौ धाम अभिराम देव चिदानंद, महासुख कंद सही नामतैं लखावै हैं ।
नाम उर जाके सोही धन्य है जगत मांहि, इन्द्र हू से आय २ जाकौ सिर नावै है ॥६७॥

दोहा

नाम अनुपम निधि यहै, परम महा सुखदाय। संत लहै जे जगत मैं ते अविनाशी थाय ॥६८॥
नाम परम पद कौं करैं, नाम महा जग सार । नाम धरत जे उर मही, ते पावैं भवपार ॥६९॥

सवैया

भवसिंधु तिरवे कौं जग मैं जिहाज नाम, पापतृण जारवे कौं अगनि समान है ।
आतम दिखायवे कौं आरसी विमल महा, शिवतरु सींचवे कौं जल कौ निधान है ॥
दुख दव दूर करिवे कौं कह्यौ मेघ सम, वांछित देवे कौं सुरतरु अमलान है ।
जगत के प्राणिन कौं शुद्ध करिवे कौं, जैसैं लोह कौं करै पारस पाखान है ॥ ७० ॥

दोहा

नवनिधि अरु चउदह रतन, नाम समान न कोय ।
नाम अमर पद कौं करै, जहां अतुल सुख होय ॥ ७१ ॥

सवैया

माया ललचाय यह नरक कौं वास करै, ताकै वशि मूढ जिनधर्म कौं भुलाय है।
अति ही अज्ञानी अभिमानी भयो डोलत हैं पारैं अंध, फंद हिये हित नहीं आय है॥
चेतन की चरचा मैं चित कहुं लावैं नाहि, ख्याति पूजा लाभ महा येही मन भाय है।
पर अनुराग मैं न जाग है स्वरूप की हैं, वहिर्मुख भयो बहिरातम कहाय हैं॥७२॥
ग्रंथ कौ कहिया ताकौ आप ढिग राख्यौं चाहै, ताका अपमान भयैं दोष न अनाय है।
ताके हांसि भये जिन मारग की हांसि ह्वै है, ऐसौ विवेक नक हिये नहीं थाय हैं॥
माया अभिमान मैं गुमान कहुं भावै नाहि, बाहिज की दृष्टि सोतो बाहिज लगाय है।
धरम उद्योत जासौं कहौ कैसै बणि आवै, झूठ ही मैं पग्यौ सांचौ धरम न पाय है॥७३॥
गुण कौ न गहै मान अति ही अन्यत्र चहै, लहैं न स्वरूप की समाधि सुख भावना।
चेतन विचार ताकौ जोग काहू समै जुरै, ताहू समै करै और मन की उपावना॥
कतक के काजि के उपाय कै उपाय करै, कामिनी के काज मैं हजारों धन लावना।

साधरमीं हेतु हित नैक न लगावै मूढ, पाप पंथ पग्यौ भव भांवरि बढावना ॥७४॥
दुर्लभ अनादि सत संग है स्वरूप भाव, ताकौ उपदेश कहुं दुलभ कहीजिये।
चरचा विधान तैं निधान निज पाईयत, होय कैं गवेषी तहां तामैं मन दीजिये ॥
ईरष्या कीये तैं बंध पडै ज्ञानावरणी कौ, गुण के गहिया ह्वै कै ज्ञानरस पीजिये।
जाकौ संग किये महा स्वपद की प्राप्ति ह्वै, सोही परमातमा सही सौं लख लीजिये ॥७५॥
जाके संग सेती महा स्वपर विचार आवै, स्वपद बतावै एक उपादेय आप हैं।
गुण कौं निधान भगवान पावै घटही मैं, ताके संग सेती दूर होय भवताप है ॥
ताके संग सेती शुद्धि सिद्धि सौं स्वरूप जानै, धन्य २ जाकौ जाके संग सौं मिलाप हैं।
ऐसौ हूं कथन सुणि क्रूर जो कुचरचा करैं, भव अधिकारी मूढ बांधै अतिपाप है ॥७६॥
एक परपद दूजो देखै परपद कौ है, देखै सो स्वपद दीसै सोही सब पर है।
ऐसें भेद ज्ञान सौं निधान निज पाइयत, चेतन स्वरूप निज आनंद कौ घर है ॥
चौरासी लाख जोनि जाम जनमादि दुख, सहे तैं अनादि ताकौं मिटै तहां डर है।

तिहुंलोक पूज्य परमातमा ह्वै निवसै है, तहां ही कहावै शिवरमणीकौ वर है ॥७७॥
केउ क्रूर कहैं जग–सार है स्वपद महा, ऐसी कहैं परिवूफदु (?) रहतु हैं।
कामिनी कुटुंब काजि लाखन लगाय देत, स्वपद बतावैं ताकौ हित न चहतु हैं।
नैक उपकार सार संत नहीं विसरै ह, ऐसौ उपकार भूलै कहत महतु है ॥
जाकी बात रुचि मेती सुणै शिवथान होय, जीके धन्य जाकौं अनुरागसौं कहतु हैं॥७८॥
तीरथ मैं गये परिणाम सुद्ध होय नांहि, मतसंग मेती स्वविचार हिये आवै हैं।
ऐसौ सतसंग परंपरा शिवपद दाता, तिनहूं सौं महामूढ मान कौ बढावै हैं ॥
लक्ष्मी हुकम लखि मन मांहि धारैं मद, ऐसे मदधारी नांही निज तत्व पावै है।
आतम की आप कोउ बात कहै राग सेती, धन्य सो वारिधिन तिन परिब गावै है (?)॥७९॥
नैक उपकार करैं संत ताहि भूलै नाहि, ताकौं गुण मानि ताकी सेवा करै भाव सौं।
आतमीक तत्व तासौं प्राप्ति ह्वैं ताही करि, अमर स्वपद ह्वै है सहज लखाव सौं ॥
ऐसौ गुण ताकौं मूढ गिणैं नाहि नैक हूं हैं, महंत कहावै कृतधनी के कहाव सौं।

सोई धन्य जगत मैं मार उपकार मानैं, आप हित करैं ताकौ पूजत सहाव सौं ॥८०॥
जासौं हित पावै ताकौ आश्रित ही राख्यौ चाहैं, मानकी मगेर मैं बडाई चाहै आपकी।
दाम ही मैं गम जानै ओर की न बात मानै, हित न पिछानै रीति बाढै भवताप की ॥
जाके उपदेश सौं अनुपम स्वरूप पावैं, ताकौ अपमानै थिति बांधै महापापकी।
औगुण गहिया भवजाल के बहिया वह, कैसें रीति राखै उपकारी के मिलाप की ॥८१॥
कह्यौ है अनंतबार सार है स्वपद महा, ताकौ बतावै सोही सांचौ उपकारी है।
ताकौ गुण मानैं जो तो सांचि ह्वै स्वरूप रती, ऐसी रीति जानैं जाकी समझि हा भारी है ॥
नय व्यवहार ही मैं कह्यौ है कथन एतौ, रीझि मैं न विकलप विधिकौं उधारी है।
ऐसौ उपदेश सार सुणि न विकार गहैं, सोही गुणवान आप आपही धिकारी है ॥८२॥
जाकैं गुण चाहि ह्वै तौ गुण कौ गहिया होय, औगुण की चाहि ह्वै तौ औगुण गहतु है।
काक ज्यौं अमेधि गहि मन म उमाह धरैं, हंस चुगै मोती ऐसे भाव सौं सहतु हैं।
भावना स्वरूप भायै भवपार पाईयतु, ध्यायै परमातमा कौं होत यौ महतु हैं।

तातैं शुद्ध भाव करि तजिये अशुद्ध भाव, यह सुख मूल महा मुनिजन कहतु हैं ॥८३॥
करम संजोग सौं विभाव भाव लगे आये, परपद आपौ मानि महादुख पायें हैं ।
केवली उकति जाकौं अरथ विचारि अब, जागि ताकौ जो तौं यह सुगुण गुहाये हैं ॥
जामैं खेद भय रोग कछु न वियोग जहां, चिदानंदराय मैं अनंत सुख गाये हैं ।
सबै जोग जुर्यौ अब भावना स्वरूप करि, ऐसे गुरु बैन कहे भव्य उर आये हैं ॥८४॥
पायकैं प्रसु(भु)त्व प्रभु सेवा कीजे बार २, मार उपकार करि परदुख हरि लीजिये ।
गुणीजन देखिकैं उमाह धरि मनमांहि, तिनहीं सौं राग करि विनरूप कीजिये ।
चिदानंद देव जाकै संग सेती पाईयतु, तेरे परमातमासौं तामैं मन दीजिये ।
तिया सुत लाज मोह हेतु काज वहे मति जाही, ताही भांतिने स्वरूप शुद्ध कीजिये ॥८५॥
कह्यौ मानि मेरो पद तेरो कहुं दूरि नांहि, तोहि मांहि तेरो पद तू ही हेरि आप ही ।
हेरे आन थान मैं न ज्ञानकौ निधान लहै, आपही हैं आप और तजि दे विलाप ही ॥
मेटि दे कलेश के कलाप आप ओर होय, जहां नहीं मूलि लागैं दोउ पुण्य पाप ही ।

तिहँ लोक शिखर पै शिवतिया नाथ होय, आनंद अनूप लहि मेटे भवताप ही ॥८६॥
केउ तप ताप सहैं केउ मुखि मौंन गहैं, केउ ह्वै नगन रहैं जगसौं उदास ही ॥
तीरथ अटन केउ करत हैं प्रभु काजि, केउ भव भोग ताजि करैं वनवास ही ॥
केउ गिरकंदरामैं बैठि हैं एकांत जाय, केउ पढि धारैं विद्या के विलास ही ।
ऐसैं देव चिदानंद कहौ कैसैं पाईयतु, आप लखैं तेई भरै ज्ञानकौं प्रकासही ॥८७॥
केउ दौरि तीरथ कौं प्रभु जाय ढूढतु हैं, केउ दौरि पहर पैं छीके चढ़ि ध्यावै हैं ।
केउ नाना वेष धारि देव भगवान हेरैं, केउ औंधे मुख झूलि महा दुख पावै है ॥
ऐसै देव चिदानंद कहौ कैसै पाईयत, आतम स्वरूप लखैं अविनाशीं ध्यावै हैं ॥८८॥
केउ वेद पढ़ि कैं पुराण कौं वखान करैं, केउ मंत्रपक्षही के लागे अति केवे हैं ।
केउ क्रियाकांड मैं मगन रहैं आठौ जाम, केउ सार जानि कै अचार ही कौं सेवै हैं ॥
केउ वाद जीति कै रिझावैं जाय राजन कौं, केउ ह्वै अजाची धन काहू कौन लेवै हैं ।
ऐसौ तौ अज्ञानता मैं चिदानंद पावै नांहि, ब्रह्मज्ञान जानै तौ स्वरूप आप वेवे है ॥८९॥

कथित जिनेन्द्र जाकौं सकल रहसि यह, शुद्ध निजरूप उपादेय लखि लीजिये ।
स्वसंवेद ज्ञान अमलान है अखंड रूप, अनुभौ अनूप सुधारस नित पीजिये ॥
आतम स्वरूप गुण धारै है अनंतरूप, जामैं धरि आयौ पररूप तजि दीजिये ।
ऐसैं शिव साधक ह्वै साधि शिवथान महा, अजर अमर अज होय सदा जीजिये ॥९०॥

दोहा

यह अनूप उपदेश करि, कीनौ है उपकार । दीप कहै लखि भविकजन, पावत पद अविकार ॥९१॥

इति

सवैया–टीका

सवैया

गुण एक एक जाकैं परजै अनंत करै, परजै मै नतुं नृत्य नाना विमतर्यौ है ।
नृत्य मैं अनंत थट थट मैं अनंत कला, (कला मै) अखंडित अनंत रूप धर्यो है ॥
रूप मैं अनंत सत सत्ता मै अनंत भाव, भावको लखावहु अनंत रस भर्यो है ।
रस के स्वभाव मैं प्रभाव है अनंत दीप, सहज अनंत यौं अनंत लगि कर्यौ है ॥१॥

टीका

गुण सूक्ष्म के अनंत पर्याय ज्ञानसूक्ष्म दर्शनसूक्ष्म वीर्यसूक्ष्म सुखसूक्ष्म सर्वगुण-सूक्ष्म, सो सूक्ष्म गुण तीका पर्याय सूक्ष्म अनंत फैल्या । सो गुण गुण मैं आया एक ज्ञानसूक्ष्म ता सूक्ष्म को पर्याय तीमैं ज्ञान सो ज्ञान अनंतो अनंत गुण आतमा आस्तित्व

वस्तुत्व द्रव्यत्व प्रमेयत्व प्रदेशत्व अगुरुलघुत्व प्रभुत्व विभुत्व इत्यादि गुण । अनंतज्ञान जान्या दर्शन नैं ज्ञान जानैं वा वीर्यनैं वा सुखनैं वा वस्तुत्वनैं वा प्रमेयत्व नैं इत्यादि प्रकार अनंतगुण नैं ज्ञान जानै । ज्ञान अनंतज्ञानपणांरूप नांच्यौ सो अनंत नृत्य भयो यो निज द्रव्य को ज्ञान द्रव्य नैं जाणैं, सो द्रव्य अनंत गुणमय वैसो द्रव्य का जानपणां रूपज्ञान नांच्यो छै सो अनंत नृत्य भयो, तो नृत्य में द्रव्य कौ जानपणौं छै, सो द्रव्य अनंतगुण को थट लिया छैं, सो गुण अनंत को थट एक द्रव्य को जानपणां नृत्य में आयो अनंत गुण किसा है ? एक एक गुण मैं अनंत प्रकार थट छै सो कहिजै छैं अनंत प्रकार भेद किसा छैं जीकौ ब्यौरौ, वीर्यगुण मैं ऐसौ थट छै जो द्रव्यवीर्य गुण-वीर्य पर्यायवीर्य क्षेत्रवीर्य भाववीर्य । क्षेत्रवीर्य क्षेत्र नै निहपन्न राखै सो द्रव्यवीर्य द्रव्य नै निहपन्न राखै पर्यायवीर्य पर्याय नै निहपन्न राखै भाववीर्य भावनैं निहपन्न राखै द्रव्य का असंख्य प्रदेश क्षेत्र छै, त्या मैं अनंतगुण को प्रकाश उठै छै, दर्शनप्रकाश ज्ञानप्रकाश वीर्यप्रकाश सुखप्रकाश प्रभुत्वप्रकाश इत्यादि अनंतगुण को प्रकाश प्रदेशक्षेत्र

तैं उठ है। एमौ क्षेत्र तिहनैं निहपन्न राखै, याही प्रकार द्रव्य का द्रव्यत्व गुणसौ उपज्या भेद त्याहनै लिया द्रव्य तिन्है निहपन्न राखै, द्रव्यवीर्य भवतीति भावपर्याय उपलक्षण भाववस्तु परिणमनरूप भाव अथवा स्वभावभाव तिन्है निहपन्न राखै, भाववीर्य ऐसौ थट वीर्य ुण कौ छै, वीर्य ुण का थट मैं वस्तुत्व नाम गुण छै एक छै वस्त को भाव वस्तुत्व सामान्यविशेषात्मक वस्तु ताकौ भाव वस्तु कौं निहपन्न राखें वस्तुत्व वीर्य वै वस्तुत्व वीर्य का थट मैं धनंत कला छै सो कहिजै छै:—

कला वस्तु मैं जो कहावै जो अनेक स्वांग ल्यावै अथवा अनेक नट की नांई कला करै, परि एकरूप रहैं त्यौं वस्तुत्व सामान्यभाव विशेष त्यां रूप सो ज्ञान जानपणांरूप परिणयो सामान्य ज्ञान को भाव ज्ञान द्रव्य नैं जानैं गुण नैं जानैं पर्याय नैं जानैं सो ज्ञान को विशेष भाव दर्शन देखि वारूप परिणयो, सो दर्शन को सामान्यभाव द्रव्य नैं देखैं गुण नैं देखै पर्याय नैं देखैं सो दर्शन को विशेष भाव ई प्रकार सकल गुण मैं सामान्य भाव विशेषभाव छै सो ऐसा भाव भेद वस्तुत्व करै छै, परि एक रूप रहै छै ऐसी कला

वस्तत्व धर्‍यां छै, वस्तुत्व गुण सकलगुण का सामान्यविशेषरूपपर्यायमंडित सो पर्याय वस्त का अनंत भया, भाव प्रमेयत्व नैं सामान्यविशेषपणौ वस्तुत्व की पर्याय दियो तब प्रमेयत्व सामान्यविशेषरूप भयो तब सामान्यविशेषरूप होय स्वरूप रहै छै जो वस्तुत्व की कला छी सो प्रमेयत्व में आई, सो कला प्रमेय धरी सो कला अनंतरूप नैं धर्‍या हैं सो कहिजै छैः——

सो प्रमेय गुण तीकी अनेक प्रकारता धरि एक रूप रह्‌वो ऐसो प्रमेय दर्शन दृष्टि सम्यक् छै तातैं प्रमाण करवा जोग्य छै। ज्ञान सम्यक्ज्ञानपणौं धर्‍या छै सो ज्ञान प्रमाण करवा जोग्य छैं। वीर्य सम्यक वस्तु निहपन्न राखिवो जोग्य छैं सो प्रमाण करवा जोग्य छै। जो प्रमेय गुण न होय तो अनंतगुण अपना रूप नैं न धरता न प्रमाणजोग्य होता, तातैं प्रमेयकरि अनंत सूक्ष्म पर्याय नैं वे पर्याय सकणगुणां मैं आया तब वां आपणै रूप धर्‍यो तातैं एक वस्तुत्व की अनंतकला तिहमैं एक प्रमेयत्व की कला तिहं प्रमेय कला अनंत-गुण रूप धर्‍यौ ज्ञान प्रमाण करिवा करि ज्ञान रूप धर्‍यो सत्तारूप धर्‍यो वीर्यरूप

धऱ्यो प्रमेयत्व मैं सत्ताको रूप आयो सो रूप अनंतसत्ता मैं धऱ्यां छै, काहेत धऱ्यां छै? सत्ता तीन प्रकार छै। स्वरूपसत्ता भेद करि महासत्ता परमसामान्य संग्रहनयकरि एक कही परि अवांतरसत्ता तथा स्वरूपसत्ताभेद करि तीन प्रकार छै। द्रव्यसत्ता गुणसत्ता पर्यायसत्ता तीना में गुणसत्ता का अनंत भेद है। दर्शनसत्ता ज्ञानसत्ता सुखसत्ता वीर्यसत्ता प्रमेत्व-सत्ता द्रव्यत्वसत्ता इत्यादि अनंतगुणकी अनंतसत्ता सो एक प्रमेयत्व मैं विराजै छ प्रमाण वाजोग्य सत्ता भई बिना प्रमेयत्व अप्रमाण होतां सत्तानैं कोई न मानतो तब अकार्यकारी भया गणना मैं न आवती तातैं प्रमेयत्व मैं अनंतसत्ता कही एक एक गुण की सत्ता विराजै छै ता एक एक गुण सत्ता मैं अनंतभाव छैं सो कहिजे छैः—एक द्रव्य छै तीको सार्थक नाम द्रव्यत्व करि पायो छै 'गुणपर्याय द्रवति व्याप्नोति इति द्रव्यम्' द्रव्यत्व गुण न होतो तो द्रव्य न होतो, काहे तैं बिना द्रया, गुण पर्याय स्वभाव को प्रकाश न होतो तातैं द्रवै तब पर्याय तरंग उठै तब गुण अनंत अनंतशक्तिमंडित अनंतगुणपुंजस्वरूप द्रव्यनिकौं परिणमना गुण परिणाम आयो तब स्वरूपलाभ

अनंत गुण लाभ आयो तब द्रव्यगुण की सिद्धि भई, । ई प्रकार द्रव्य द्रवै पर्याय उठै तब वो पर्याय द्रव्य नै द्रवै तब पर्याय गुण द्रववा करि गुण परिणति तैं गुणलाभ लो गुण मैं मिलै तब गुण सिद्धि ह्वै तब गुण समुदाय द्रव्य सिद्धि है। गुण द्रवै तब पर्याय रूप द्रयां ह्वै गुण पर्याय द्रवै तब पर्याय गुण द्रववा करि गुणपरिणति तैं गुण लाभ ले गुणमैं मिले तब गुणसिद्धि ह्वै तब गुणसमुदाय द्रव्य सिद्धि है। गुण द्रवै तब पर्याय गुणपरिणति तीनौं एक ह्वै तब स्वयं स्वपर रूप है। तब गुण लक्षण करि लक्ष्य नाम पावै गुण द्रवै तब एक सत्व सकल गुण को होय तिन द्रव्य की सिद्धि होई। ई प्रकार द्रव्यत्व सत्ता द्रय करि अनंत भाव नैं धर्‍यौ छै। ई प्रकार द्रव्यत्व सत्ता ज्यौं अनंतभाव धर्‍यां छै जो जो गुण रूप मैं सत्ता कही सो वाही सत्ता ज्यौं द्रव्यत्व करि भेद छै त्यौं भाव दिखायो त्यौंही अगुरुलघुत्व सत्ता भाव अनंत नैं धर्‍यां छै गुरुलघु भयां इन्द्रीग्राह्य होय भारी हूंवा गिरि पड़ै; हल्की भया उडिजाय तब अबाधित अनाघात सत्ता घाती जाय तातैं अगुरुलघु सत्ता को भाव अनंतधा छै।

ज्ञान अगुरुलघु दर्शन अगुरुलघु इत्यादि अनंतभाव अगुरुलघु धऱ्यां छै। एक प्रदेश अगुरुलघु प्रदेश भाव छै ती प्रदेश अगुरुलघु प्रदेश भाव लखाव काजे तब अनंत रस होइ छै सो कहिये छैः— वै प्रदेश अगुरुलघु भाव न सम्यग्दृष्टि देखिजे तब अनंत रस होई छै सो कहिये छै। प्रदशस्यौं अनंतगुण प्रकाश उठै छै। एक एक गुण प्रकाश संज्ञा संख्या लक्षण प्रयोजनादि अनंत भेद रूप भाव अनेक दिखावै छैं अरु सत्ता रूप वस्तु एक छैं। एक एक प्रदेश मैं अनंत धरश गुण को छैं गुण अनंत-शक्तिनै लियां छै। पर्याय नृत्य थट कला रूप सत्ता भाव आदि द्रव्य क्षेत्र काल भाव आदि भेद प्रकाश सकल भेद को एक सत्व अभेद प्रकाश सकल प्रकाश मिलि एक चिद्प्रकाश अभेदप्रकाश एक एक प्रदेश इसो प्रकाश नैं लियां ऐसा असंख्य प्रदेश कों पुंज वस्तु प्रकाश तिंहका एक प्रदेश प्रकाश मांहूं जो देखिजे तो अनंत अनुभव रस स्वानुभूति रस देखतां अपार शक्ति भेदाभेद प्रकाश मैं अनंत चिद्प्रकाश रस लक्षण करतां अनुभव रस होय छै सो अनंत छै वचन अगोचर छै।

अब जी रस को जो स्वभाव छै अरु जी स्वभाव अनंत प्रभाव छै सो कहिजे छैः— प्रदेश को अगुरुलघु तीको जों लखाव करता रस सो प्रदेश अगुरुलघु भाव को भेदाभेद चिदप्रकाशनिको लखाव तीमैं जो रस की स्थिति अनुभूति तथा अनुभव रम तींको स्वरूप नींकों गमनरूप भाव सो स्वभाव भेदाभेद चिदप्रकाश भाव कौं लखाव अतीन्द्रिय आनंद रम भग्यो छै तीकौं यथावस्थित आनंदरस कौं सु कहतां भलै प्रकार भवन कहता भाव तीकौं वे रसको स्वभाव कहिजे अब वैं रस का स्वभावकौं प्रभाव कहिजै छैः—वै आनंदरसकौं भलै प्रकार हौंवें तींकों प्रभाव ऐसौ छै, वचनगोचर न छैं। अंतसौं रहित छै वो केवलज्ञानसों उपज्यो छै सो ज्ञान त्रिकालवर्ती त्रिलोक का पदार्थ अलोकसहित तिंह का द्रव्यगुणपर्याय उत्पादव्ययध्रौव्य द्रव्य वा काल भावादि समस्त भेद जानै छै ऐसी ज्ञान सो अभेद सत्व छै तातैं केवलज्ञान कौं प्रभाव अनंत छै वैंरस की स्वभाव कौ प्रभाव अनंतगुणको प्रभाव प्रभुत्व एकठो कीज्ये ऐसो छै आत्मा को अनंतगुणरूप सहज छैं सो अनंतगुण पर्यन्त साधनौ वै प्रभाव मैं द्रव्यक्षेत्र

काल भाव करि सदा अविनाशी चिदविलास वो छै ॥

इति